Chapter-5

पंचम अध्याय

विवेच्य उपन्यासों में संरचनात्मक वैशिष्ट्य

कुछ चर्चित साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों का संरचनात्मक वैशिष्ट्य

हिन्दी उपन्यासों की तरह गुजराती उपन्यासों में भी कथ्य एवं शिल्प के धरातल पर वैविध्य मिलता है। संरचनात्मक वैशिष्ट्य का तात्पर्य उपन्यास के कथा शिल्प से है। कथा का गंथाव, उसके वाक्य, शैली, शब्द आदि की योजना लेखक ने किस संयोजन के रूप में की है, इन्हीं बातों का विश्लेषण रचनाकार की कृति (उपन्यास) के आधार पर किया जाता है।

उपन्यास प्रायः अधिक विस्तृत फलक लिए होता है, अतः उसमें कथा–संयोजन भी विविध शैलियों का प्रयोग होता है। शैली शिल्प का संरचनात्मक वैशिष्ट्य रचनाकार की प्रतिभा का परिचय देता है, इसलिए वास्तव में यों कहा जा सकता है कि सौंदर्य रचना के अनुभव करने में होता है, उपन्यास को रसानुभूत करने में होता है। यह रसानुभूति भावगम्य भी होती है और शिल्पगम्य भी। शैलियों की विविधता उपन्यासों में खास तौर से प्रयोग होती है और साठोत्तरी उपन्यास तो वैसे भी प्रयोगधर्मी रहे हैं। हिन्दी उपन्यासों की तरह गुजराती उपन्यासों में भी कथ्य एवम् शिल्प के धरातल पर वैविध्य मिलता है।

अंधेरे बंद कमरेः

मोहन राकेश कृत 'अंधेरे बंद कमरे' प्रसिद्ध उपन्यास है, जो साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत है। उपन्यास के कथानक की पृष्ठभूमि दिल्ली है। वहाँ के सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण का उल्लेख किया है। मध्यवर्गीय समाज में प्रवर्तमान समस्याओं का आलेखन है। इस उपन्यास में प्रमुख पात्र मधुसूदन, हरबंस, नीलिमा और शुक्ला है। उपन्यास के कथानक के प्रारंभ में दिखाया जाता है कि मधुसूदन नौ वर्षो के बाद दिल्ली आया है। वास्तव में मधुसूदन के द्वारा लेखक ने हरबंस और नीलिमा की कहानी कही है। हरबंस और नीलिमा पति–पत्नी हैं। हरबंस अध्यापक से सरकारी विभाग में अफसर हो जाता है। हरबंस भी आज के आधुनिक पतियों की तरह नीलिमा को नृत्य सिखने के लिए प्रेरित करता है। लेकिन जब नीलिमा अपने केरियर के प्रति रूचि दिखाने लगती है तो हरबंस खीझने लगता है। यहीं से दोनों के दाम्पत्य जीवन में मूल्य संघर्ष शुरु हो जाता है। इसमें हरबंस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी है। नीलिमा की बहन

शुक्ला की कहानी भी कथानक में साथ–साथ चलती है। सुषमा श्रीवास्तव उपन्यास की अत्यन्त आधुनिक स्त्री पात्र है। प्रत्येक क्षेत्र में वह पुरुष की स्पर्धा करती है। वह स्पष्ट एवं दो टूक बात करनेवाली है। किन्तु उपन्यास के अन्त में वह भी अकेलेपन से टूटती हुई प्रतीत होती है। ''इस कथा में मनुष्य के मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों की एक झाँकी हम देखते हैं। ये अंतर्द्वन्द्व बड़े सामाजिक संघर्षो के परिपार्श्व में देखे गये हैं। बेचारा प्राणी किसी काल्पनिक सुख की आशा में चारों ओर भागा फिरता है, किन्तु उसे अपनी अशान्ति से छूटकारा नहीं मिलता। शर से बिंधे शिकार की भाँति वह तड़फड़ाता रहता है।''[1]

इस उपन्यास में मध्यमवर्गीय सुशिक्षित व्यक्ति की प्रधान समस्या 'अहं' को लिया गया है। लेखक ने खुद इसके कथानक को स्पष्ट करते हुए लिखा हैः ''और जहाँ तक परिचय का सवाल है, मैं सोचकर भी तय नहीं कर पा रहा हूँ कि इसे क्या कहूँ? आज की दिल्ली का रेखाचित्र? पत्रकार मधुसूदन की आत्महत्या? हरबंस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी?''[2] इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में दिखाया गया है कि किस प्रकार लोग कृत्रिम परिस्थितियों में जी रहे हैं।

मध्यमवर्गीय जीवनशैली, मूल्यों विचारों को अभिव्यक्ति देने के लिये उपन्यासकारों ने उपन्यासों की संरचनात्मक वैशिष्ट्य को भी ध्यान में रखा है। शिल्प, भाषा, संवाद कई स्तरों पर हिन्दी उपन्यास में नये कलेवर में सामने आया।

साहित्य में शैली के स्थान और महत्व के संबंध में डॉ. दशरथ ओझा ने लिखा हैः ''कथा में शैली का वही स्थान है, जो मनुष्य में उसके स्वरूप, आकृति तथा वेशभूषा का है।''[3] 'अंधेरे बंद कमरे' उपन्यास आत्मकथात्मक होते हुए भी वर्णनात्मक का रूप धारण करता है। इस उपन्यास का मध्यमवर्गीय पात्र कथा का प्रणेता और श्रोता दोनों है। अतः इसमें आत्मकथात्मक तथा वर्णनात्मक शैली का मिश्रित रूप मिलता है। ''इसके पहले भी आत्मकथात्मक शैली के उपन्यास लिखे गये हैं,किन्तु यह उनसे भिन्न कोटि का है। उपन्यास में भाषा शैली का कोई निर्धारित तथ्य सामने नहीं आ पाता। उर्दू, फारसी, अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है। देशी शब्दों के प्रयोग भी किये गये हैं। शैली शिल्प में आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक, फ्लैशबैक तथा पत्रात्मक आदि शैलियों का प्रयोग किया गया है। मधुसूदन नौ वर्षो के पहले की बातों का उल्लेख करता है। नीलिमा पेरिस तथा अन्य विदेशी जीवन की बातों का दिल्ली में

मधुसूदन से उल्लेख करती है। हरबंस विदेश यात्रा एवं विदेशी परिस्थितियों का पत्रात्मक शैली में उल्लेख करता है।''[4]

नीलिमा पेरिस के अनुभव सुनाती है, यूरोप की यात्रा का प्रसंग आदि वर्णनात्मक शैली में है। हरबंस अपना और नीलिमा का वृत्तांत मधुसूदन को बताता है, वह फ्लैशबैक शैली का नमूना है। 90 पृष्ठ तक स्मृति की कहानी चलती है। इस उपन्यास में संवाद शैली का भी प्रयोग किया गया है। सांकेतिक अथवा प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग भी किया गया है ।

राकेश ने 'अंधेरे बंद कमरे' में ऐसे पात्रों का चरित्र चित्रण किया है, जो जीवनगत त्रासदियों को सहते–सहते हताशा–निराशा के बीच अकेले छूट गये हैं। ऊब, विवशता, भटकन, अजनबीपन और टूटन उनके पात्रों में भरे पड़े हैं। 'अंधेरे बंद कमरे' में हरबंस और नीलिमा ऐसे पात्र हैं जो बेचैनी और भटकन के शिकार हैं। व्यक्तिवादी उपन्यास के नाते 'अंधेरे बंद कमरे' के पात्र अपना रास्ता खुद बनाते हैं। उन सबका अपना अलग–अलग दायरा है, जिसे तोड़कर कोई भी दूसरों के हिसाब से जीना नहीं चाहता। सभी प्रमुख पात्र अपनी–अपनी भावनाओं और महत्वाकांक्षाओं का सहारा लेकर जिंदगी व्यतीत करना चाहते हैं। इसी वजह से वह बहुत जल्दी बंद कमरे में बंद हो जाते हैं।

संवाद का उपन्यास को सुसंगठित और मनोरंजक बनाने में महत्वपूर्ण स्थान है। राकेश के उपन्यासों के संवादों में वैयक्तिक यथार्थ की धारा प्रवाहित होती दिखायी देती है। डॉ. सुषमा अग्रवाल ने राकेश के संवाद शिल्प के बारे में लिखा हैः ''राकेश ने संवादों के लिए संवाद का प्रयोग कभी नहीं किया है। वे कहीं पर आये हैं, जहाँ उनकी आवश्यकता है। साथ ही जैसे आवश्यकता वैसे ही संवादों का प्रयोग राकेश के संवाद शिल्प की विशेषता रही है।''[5]

राकेशजी के 'अंधेरे बंद कमरे' में आये संवादों का महत्व बाह्य परिवेश की जगह अन्तर्मन्थन की अभिव्यंजना से ज्यादा है। पात्र बौद्धिक वर्ग से जुड़े हुए होने की वजह से प्रायः एक सी भाषा का प्रयोग हुआ है। ठकुराइन के संवादों की भाषा उसके व्यक्तित्व के अनुरूप है। राकेश जीने अपने इस उपन्यास में सामाजिक विरोधाभासों,मध्यवर्गीय शहरी एवं कस्बाई परिवारों की टूटन, दाम्पत्य सम्बन्धों की विसंगतियों आदि सामाजिक स्थितियों का चित्रण पात्रों के संवादों के माध्यम से बड़ी ही कुशलता से किया है। सामाजिक परिस्थिति को प्रकट करने वाले संवाद

यहाँ प्रस्तुत हैं। हरबंस और नीलिमा के दाम्पत्य संबंध अच्छे नहीं हैं। हरबंस अपने मित्र मधुसूदन को बीते दिनों की बातें सुना रहा है। नीलिमा अपनी बहन की बेटी के जन्मदिन की पार्टी से शराब पीकर घर लौटती है और दोनों की बातें सुनकर कहती हैः ''तुममें से कौन गुजरे हुए दिनों की बातें कर रहा था?''

नीलिमा बोलीः ''यह या तुम?''

''मैं गुजरे हुए दिनों की बात कर रहा था।'' हरबंस ने झुँझलाकर कहा,

''तुम्हें इससे कुछ एतराज है?''

''तुम मेरे पीछे मेरी निन्दा करो, लोगों से झूठी सच्ची बातें बनाकर कहो, तो मुझे एतराज नहीं होगा?''

नीलिमा ने इस तरह कहा जैसे उसे दुनिया में किसी की परवाह न हो। वह लड़खड़ाकर बोलीः ''तो मेरा पति आज तुम्हें यह बताता रहा है कि मैं कितनी बुरी हूँ और इस बेचारे को मेरी वजह से कितना परेशान होना पड़ा है।च् च् च्च्।''

''तुम आज फिर पीकर आयी हो?'' हरबंस की आँखें गुस्से से लाल हो गयी, ''तुम्हें शर्म तो नहीं आती होगी?''

''मैं पीकर आयी हूँ तो, और नहीं पीकर आयी तो उसमें तुम्हारा क्या आता जाता है?''[6]

नीलिमा और हरबंस के दाम्पत्य जीवन में दरार बढ़ती जाती है। इस बारे में नीलिमा मधुसूदन से कहती हैः ''मेरा खयाल है कि वह मेरी वजह से बहुत दुःखी है और अब मुझसे छुटकारा चाहता है।''

''यह तुम कैसे कहती हो?''

''मैं जानती हूँ। वह कई बार मुझसे कह भीचुका है। कल दिन भर वह मुझसे उलझता रहा था और तभी फोन करके उसने तुम्हें बुलाया था।''[7]

इस प्रकार 'अंधेरे बंद कमरे' में आलोचनात्मक एवं व्यंग्यात्मक संवाद कौतूहल भावपूर्ण संवाद, राजनीतिक स्थिति को प्रकट करने वाले संवाद, प्राकृतिक स्थिति को प्रकट करनेवाले संवाद देखने को मिलते हैं। राकेश ने अपने उपन्यासों में सरल सहज और स्वाभाविक भाषा में संवाद प्रस्तुत किये हैं।

मोहन राकेश ने 'अंधेरे बंद कमरे' में अंग्रेजी, उर्दू, फारसी, देहात एवं अंचल के शब्दों का प्रयोग किया है। सांकेतिकता, बिम्ब, प्रतीक, काव्यात्मकता और नाटकीयता का अपनी भाषा में प्रयोग किया है। पात्रों के अनुसार भाषा का चुनाव किया है। ''राकेश की भाषा में सूक्ष्मता, बारीकी और गहराई है तथा जीवन की विविधता को अभिव्यक्ति देने की क्षमता है।''[8] विवेच्य उपन्यास के सभी पात्र शिक्षित हैं। इसकी भाषा में आत्मीयता, भावानुकूलता, प्रसंगानुकूलता, चित्रात्मकता तथा प्रवाहशीलता है। पंजाबी शब्दों का प्रयोगः ''अंधेरे बन्द कमरे' में उमादत्त के ट्रूप के सरदारजी और हरबंस के संवाद (पृ. 181-182) के मध्य आये हैं। सच्चे पातशाहो भेगी, नीलिमा बीबी, पुच्छया, राजी-बाजी सत-सिरी अकाला।

संस्कृत शब्दों का प्रयोग : ''विचित्र उत्सुकता, विभाजन, सुरक्षित, टीका, टिप्पणी, आश्चर्य, संकेत, स्पष्ट, निश्चय, कार्यलय, ब्जाय, नवयुवक।''[9]

अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोगः ''हालाँकि, मजबूरन, बनिस्बत, अखबारनवीस, तकल्लुफ, अदावत, कोफ्त, जायका, मंजिल, हिफाजत, मोहलत, कमजात, मरूदूत, फरमाइश, मुद्दत।''[10]

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोगः ''हाउस, स्टॉप, पैकेट, रिलीव, कॉरिडोर, डार्मिटरी, प्रूफरीडर, स्लाइस, कॉलेज, कस्टोडियन, स्टिललाइफ, ऐब्सेट्रैक्ट, पेन्टर, स्कूल, फोरैन, प्रूफ, नोटिस।''[11]

डॉ. रमेशकुमार जाधव ने लिखा हैः ''राकेश जी ने अपनी भाषा में शब्दों के चुनाव में कोई विशेष आग्रह नहीं दिखाया है। उन्हों ने भावानुकूल संस्कृत के तत्सम् शब्दों से लेकर उर्दू एवं अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग किया है।''[12]

राकेश जी ने इस उपन्यास में भाषा और शैली को लोकप्रिय तथा आकर्षक बनाने के लिए लोकोक्तियों का भी इस्तेमाल किया है। 'अंधेरे बंद कमरे' का एक उदाहरण प्रस्तुत है।

''झूठ बोलते वक्त जाने जबान कुछ जकड़ क्यों जाती है। इससे झूठ बोलने का सारा मजा किरकिरा हो जाता है और दूसरों को भी फौरन पता चल जाता है कि बात झूठी कही गयी है।''[13]

न आनेवाला कलः

'न आनेवाला कल' शिमला के एक स्कूल फादर बर्टन स्कूल के परिसर में हिन्दी के जूनियर शिक्षक मनोज के त्यागपत्र को लेकर हुई प्रतिक्रिया को लेकर रचा गया है। बर्टन स्कूल के परिवेश के साथ मनोज सक्सेना के व्यक्तिगत जीवन का भी उल्लेख है। मनोज का विवाह शोभा के साथ हुआ था। वह उसका दूसरा पति था। परंतु दोनों का लग्न जीवन तनावपूर्ण है। इसलिए शोभा ने थोड़े समय के बाद खुरजा जाने का निश्चय कर लिया जहाँ उसकी पहली ससुराल थी। शोभा के चले जाने के बाद वह अकेलेपन से गुजरता है।

मनोज के त्यागपत्र देने के पीछे दो कारण प्रवर्तमान थे – एक स्कूल के वातावरण से छुटकारा और दूसरा शोभा के साथ जीने की यंत्रणा से बचाव। स्कूल के लोग उसे ऐसा न करने के लिए समझाते हैं। मनोज के व्यक्तिगत प्रश्न बताने पर त्यागपत्र स्वीकार कर लिया जाता है। इस बीच वह बानी के सम्पर्क में भी आता है। स्कूल के चपरासी की पत्नी को भी वह शारीरिक आवेग में आकर चूम लेता है। दूसरे दिन सारा सामन बाँधकर बस स्टैण्ड के लिए रवाना हो जाता है।

'न आने वाला कल' उपन्यास में आत्म–कथात्मक शिल्पविधि का प्रयोग हुआ है। इसमें वैयक्तिक यथार्थ पर ज्यादा जोर दिया गया है। 'न आनेवाला कल' में आधुनिक मध्यमवर्गीय व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व, निर्णय की दुविधा, अकेलेपन की यंत्रणा, व्यक्तिगत उलझनों को रूपायित किया गया है। मध्यमवर्ग से जुड़े हुए परिवार जो महानगरों में जीवनयापन करते हैं, उनकी कथा है। इस उपन्यास में मध्यमवर्गीय चेतना को बखूबी उभारने का यत्न किया है।

'न आने वाला कल' चरित्र चित्रण के अध्ययन से पता चलता है कि उसमें अतृप्ति, असंतोष, अधूरेपन की अनुभूति साफ़ झलकती है। उपन्यास के पात्र मध्यमवर्गीय समाज से संबंधित हैं। इस उपन्यास के सभी पात्रों के मन में असंतोष और घुटन व्याप्त है। इस कारणवश उनके आपसी रागात्मक संबंध बिखरने के कगार पर हैं। पात्रों में आपसी आक्रोश, खीझ, झल्लाहट देखने को मिलती हैं। वे अपने सामाजिक परिवेश, पुरानी मान्यताओं से मुक्त होना चाहते हैं। लेकिन हो नहीं पाते। ये पात्र परिस्थिति से समझौता नहीं कर पाते। इसके पीछे सामाजिक और आर्थिक कारण भी जवाबदार हैं। पात्रों का चरित्र–चित्रण विशेषात्मक विधि द्वारा किया गया

है। इसके साथ–साथ मनोवैज्ञानिक विधि, संवादात्मक विधि, विवरणात्मक विधि का प्रयोग किया है। 'न आनेवाला कल' के पात्र ऐसे भविष्य की खोज में हैं, जिसकी कहीं भी कोई शक्यता नहीं है। 'न आनेवाले कल' उपन्यास में अधिकांश पात्र विवाहित हैं और प्रायः पति–पत्नी दोनों सुशिक्षित एवम् प्रोफेशनल हैं। जैसे मनोज और शोभा, पार्कर और मिसेज पार्कर, चेरी और लारा, व्हिसलर और जैनी, कोहली और शारदा। इस उपन्यास के पात्र अत्याचार का विरोध करनेवाले, जीवन की विसंगतियों में संघर्ष करनेवाले, आर्थिक विषमता से जूझनेवाले हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में राजनीतिक, सामाजिक, भौगोलिक, प्राकृतिक तथा पहाड़ी स्थानों का वर्णन है। 'न आनेवाला कल' के संवाद शिल्प का विवेचन करने से स्पष्ट होता है कि संवादों में व्यक्तिमन की अनुभूतियों, वासनाओं, कुंठाओं, टूटन, ऊब, तनाव देखने को मिलता है। इस उपन्यास में कौतूहल–भावपूर्ण संवाद, आलोचनात्मक संवाद, सामाजिक संवाद, राजनीतिक संवाद, दाम्पत्य जीवन की दरारों को रेखांकित करनेवाले संवाद देखने को मिलते हैं।

दाम्पत्य संबंधों को लेकर 'न आनेवाला कल' का मनोज और शोभा का संवाद दृष्टव्य हैः

''तुम कब जाने की सोचती हो?''

''कल शाम की बस से।''

''तो ठीक है। जब तुमने तय ही कर लिया है, तो मैं तुम्हें रोकना नहीं चाहूँगा।''

''इसका मतलब यही है न कि तुम साथ नहीं चलोगे?'' उसकी गरदन थोड़ी कस गयी।

''तुम जब जा ही रही हो, तो मुझे तुमसे कुछ पूछना नहीं चाहिए। पर मैं अब तक समझ नहीं पाया कि खुर्जा जाने की बात अचानक तुम्हारे मन में आयी कैसे?''

वह शाल समेटती हुई खड़ी हो गयी थी। ''बात खुर्जा जाने की नहीं, यहाँ से जाने की है।'' उसने कहा। ''और कितनी जगह हैं, जहाँ मैं जा सकती हूँ।''[14]

इस संवाद में मनोज और शोभा के दाम्पत्य जीवन में प्रवर्तमान कटुता, रिक्तता, असंगतियों, खालीपन को देख सकते हैं। इनके संवाद प्रायः संक्षिप्त एवं सहज हैं।जहाँ संवाद लम्बे हैं वहाँ पात्र की भावावेश स्थिति उभरती है। आत्मविश्लेषण की प्रक्रिया में संवाद स्वगत कथन के रूप में देखने को मिलते हैं।

'न आनेवाला कल' में भाषा के तीन स्तर देखने को मिलते हैं। परिष्कृत शब्दावली जिसमें

संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है। दूसरा परिवेश से सम्बन्धित भाषा। इसमें उर्दू, अरबी, फारसी, देहात एवं अंचल के शब्दों का प्रयोग हुआ है। तीसरा सांकेतिकता, बिम्ब, प्रतीक काव्यात्मकता और नाटकीयता की भाषा का प्रयोग हुआ करता है।

संस्कृत के इन शब्दों का प्रयोग 'न आनेवाला कल' में हुआ हैः ''अर्थात्, अन्तराल, प्रेमिका, शब्द, प्रिय, अक्षर, अभ्यस्त, कोमलता, युद्ध–विराम, सम्बन्ध विच्छेद, मानसिक संकट, यंत्रणा, व्यवहार, आत्महत्या, गुण, आलोचना, क्षमा, घृणा,प्रक्रिया, अनुशासन, अभिवादन।''[15]
अरबी–फारसी के शब्दः ''नुक्स, जिस्म, नौबत, काषिल, मुकाम, जिक्र, सज़ायाफ्ता, खालिस, खुराक, तरददुद''[16]
अंग्रेजी के कुछ शब्दः ''सर्मन, बिल्डिंग, क्लास, ट्रांसफर, रिडायरेक्ट, कांट्रैक्ट, कैंसिल।''[17]
'न आनेवाला कल' में पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। मनोज सक्सेना और हेडमास्टर टोनी व्हिसलर के बीच का संवाद दृष्टव्य है। भाषा शिक्षित वर्गानुकूल है।

'लुक हेयर' उसने जाते ही कहा, 'एक बात है जो मैं नई टर्म शुरु होने से पहले ही तुम्हें बता देना चाहता हूँ। तुम्हारे पास इस साल भी उतने ही पीरिएड रहेंगे जितने पिछले साल थे। तुम्हें इस बारे में कुछ कहना तो नहीं?''

''वैसे तो आप जो भी फैसला करें, ठीक है।''[18]
इस प्रकार, 'न आनेवाला कल' में भाषा का सुन्दर और प्रभावशाली प्रयोग हुआ है। भाषा–शैलियों का प्रयोग भी प्रभावशाली ढंग से किया गया है। इस उपन्यास में उन्हों ने काव्यमयी शैली, चित्रमयी शैली, मार्मिक भाषा–शैली, मानसिक अन्तर्द्वन्द्वयुक्त भावपूर्ण शैली, विचारप्रधान एवं बौद्धिक शैली और अलंकारिक शैली का प्रयोग किया है। साथ ही मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भाषा में हुआ है। उनकी उपन्यास की भाषा मूलतः मनुष्य के अन्तर्जीवन की अभिव्यक्ति है।

आपका बण्टी – मन्नू भण्डारी

'आपका बण्टी' सामाजिक उपन्यास है और उसकी कथा मानव जीवन से सम्बन्धित है। कथानक को स्मृति चित्रों के माध्यम से संजोया है। शकुन और अजय के दाम्पत्य जीवन में प्रचण्ड अहं के कारण हमेशा क्लेष रहता है। वह दोनों एक–दूसरे के सामने झुकना उचित नहीं

समझते। दोनों ही एक–दूसरे की प्रत्येक बाद, व्यवहार और अदा को एक नवीन दाँव समझने के लिए विवश थे तथा इस विवशता ने दोनों के बीच की दूरी को धीरे–धीरे इतना बढाया कि शिशु बण्टी भी उस खाई को पाटने के लिये सेतु नहीं बन सका। यहाँ पर शकुन कलकत्ता छोड़कर एक अन्य नगर में कॉलेज में अध्यापन कार्य शुरु किया। अजय ने मीरा के साथ दूसरी शादी कर ली। शकुन भी डॉ. जोशी के साथ दूसरा विवाह करती है। लेकिन इस बीच में बण्टी की दयनीय स्थिति हो जाती है। उसके मानसिक संघर्षों की शुरुआत होती है। अजय और शकुन के दोनों के पुनर्विवाह के कारण बण्टी अपने को लावारिस समझने लगता है। उसके पापा और मम्मी अब उसके नहीं रहे। मासूम बालक की मनःस्थितियों को बखूबी प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यास में बंटी एक अत्यन्त जीवन्त तथा कथा का मुख्य पात्र है। उसके व्यक्तित्व का निर्माण माता–पिता के बीच होता है। उपन्यास के इस संवाद को पढ़कर लगता है कि बंटी की परिणति पूर्वनिर्धारित हैः ''सच! हम लोग शायद बंटी को मात्र एक साधन ही समझते रहे।''[19] इसमें बंटी की कथा ही मूल या आधिकारिक या प्रमुख कथा है। बण्टी से ही शकुन अजय, डॉ. जोशी, कूकी एवं मीरां आदि पात्र किसी न किसी रूप में सम्बोधित हैं और वे सभी केवल बण्टी की चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट करने में सहायक रहते हैं।

'आपका बण्टी' के सभी पात्र लौकिक हैं और उनके आचार–विचार तथा दैनिक व्यवहार में हमें कहीं भी अस्वाभाविकता नहीं दिख पड़ती। 'आपका बण्टी' की पात्र योजना स्वाभाविक एवं सार्थक है और सभी पात्रों का न केवल समुचित निर्वाह हुआ है, बल्कि वे यथार्थ जीवन का प्रतिबिंब प्रस्तुत करने में पूर्ण सफल रहे हैं। इस उपन्यास में आदर्शवादी पात्रों के निर्जीव चरित्रों की योजना न कर यथार्थवादी सजीव चरित्रों की योजना करने के कारण उनका चरित्र स्वाभाविक ही जान पड़ता है। डॉ. सुरेश सिन्हा का विचार हैः ''इस उपन्यास के सभी पात्र रीते हैं। अपने रीतपन में संतुलन स्थापित करने और अपने परिवेश से जुड़ने की प्रयत्नशीलता उनकी मुख्य समस्या है। यह बण्टी की समस्या है और शकुन की भी। भिन्न स्तर पर यह डॉ. जोशी की समस्या है और अजय की भी। सभी टूटे हुए हैं, पर दिग्भ्रमित नहीं। सभी उलझनों में बंधे हुए हैं, पर कुंठित या हताश नहीं।

'आपका बण्टी' में चरित्र चित्रण के लिए विश्लेषणात्मक एवं नाटकीय प्रणालियों का प्रयोग

किया है। 'आपका बण्टी' में आकर्षक एवं प्रसंगानुकूल संवादों की योजना हुई है। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्घाटन करने में समर्थ रहे हैं। यहाँ शकुन और डॉ. जोशी के संवाद दृष्टव्य हैं:

''बताओ न क्या जवाब दें अजय को?'' शकुन को जैसे जवाब चाहिए ही, वह भी डॉक्टर से ही।

''मैं मिस्टर बत्रा को बिलकुल नहीं जानता। उन्होंने यह भी नहीं समझ सका। क्या जवाब हो सकता है इसका? मैं क्या बताऊँ।''[20]

सामान्यतया औपन्यासिक कथा के प्रस्तुतीकरण की वर्णनात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, संवादात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, स्मृत्यावलोकन (फ्लैशबैक) शैली, डायरी शैली एवं चित्रात्मक शैली आदि विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। 'आपका बण्टी' उपन्यास मुख्यतया वर्णनात्मक शैली में ही लिखा गया है। परंतु प्रसंगानुरूप संवादात्मक एवं चित्रात्मक प्रणालियों का भी प्रयोग किया है। अनेक विगत घटनाओं का चित्रण फ्लैशबैक शैली की सहायता से किया गया है। बण्टी को पापा अजय के साथ की गई कलकत्ता यात्रा का प्रसंग याद आता है। वह फ्लैशबैक शैली का सुन्दर उदाहरण है। 'आपका बण्टी' उपन्यास में चेतना प्रवाह शैली के भी सुंदर उदाहरण देखने को मिलते हैं।

''और रोशनी के चौखटों पर जैसे कहीं से एक धूँध की परत छा गई। लेटा तो साथ-साथ दौड़ते हुए रोशनी के सारे चौखट स्याह अंधेरे में ही घुल गये। वह चमकता हुआ लाल तारा भी डूबा। और बंटी, उस अंधेरे से डूबता ही चला गया। फिर उसे अंधेरे में से एक और अंधेरा उभरा...''[21]

'आपका बण्टी' उपन्यास की भाषा शैली पर ध्यान देते हैं तो पता चलता है कि उसमें संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, उर्दू एवम् लोकोक्ति तथा मुहावरों का यथातथ्य प्रयोग किया गया है। संस्कृत शब्दों में तृप्ति, उदार, आत्मसंतोष, भाव, असह्य, व्यस्त, निष्कर्ष, क्षमाशीलता, स्वीकार, व्यक्तित्व इत्यादि। अंग्रेजी शब्दों में ड्रेसिंग टेबुल, कॉलेज, फाइल, प्रिंसिपल, बिल्डिंग, गेट, साइकिल, सरकिट हाउस, टैस्ट, मम्मी, पापा इत्यादि का उपयोग हुआ है। अरबी एवं फारसी के शब्दों में चुपचाप, आज, हमेशा, फरमाइश, बंदूक, मुकाबला, शाबाशी, इत्यादि। इसी प्रकार 'आपका बण्टी' में मुहावरों और लोकोक्तियों या कहावतों का भी आकर्षक प्रयोग किया गया है।

जैसे–''ऐसी शान दिखाना जैसे लाट साहब हो, उल्टे पैरों लौट जाना, पीठ पर हाथ फेरना इत्यादि।

'आपका बण्टी' आधुनिक समाज के अन्तर्विरोध, विकृति, अलगाव, अकेलेपन, ऊब, नीरसता, तनाव की प्रभावशाली अभिव्यक्ति है।

एक नन्ही किन्दीलः उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

'एक नन्ही किन्दील' विभाजन पूर्व हिन्दुस्तान के महानगर लाहौर में मध्यवर्ग के संघर्षरत नायक चेतन की कथा है। चेतन के पारिवारिक जीवन की विभिन्न समस्याओं को दिखाया गया है। नायक चेतन के संघर्षमय जीवन में पाठक अपने यथार्थ संघर्षमय जीवन को बिंबित पाता है। चेतन के सपने, अन्तर्द्वन्द्व, उलझनें, इच्छाओं को दर्शाया है। चेतन की आंतरिक और बाह्य ग्रंथियों को सुलझाने का प्रयत्न किया है।

उपन्यास का आरम्भ नायक चेतन से होता है जह वह शिमला में धूर्त कविराज रामदास के शोषण का शिक र बना जालन्धर में साली नीला की शादी रंगून विधुर से होते देख खिन्न होता है। लाहौर आ जाता है, घर की समस्या के साथ नौकरी की समस्या का भी सामना करना पड़ता है। सम्पादक विभाग में कार्य करते हुए चेतन को अनेक ऐसे अनुभव होते हैं। अंतिम खण्ड में चेतन की पारिवारिक समस्याओं का लेखा–जोखा प्रकट करता है। प्रस्तुत उपन्यास में मध्यमवर्गीय व्यक्तियों के स्वार्थ, अश्लीलता, असभ्यता, फूहड़पन, कुण्ठाएँ, सामाजिक विषमताएँ, आर्थिक संघर्ष को व्यापक रूप से चित्रित किया है. इस उपन्यास में प्रासंगिक कथाओं में मुख्य है कश्मीरी लाल, भूतना चालक, महाशाप जीवन, लाल कपूर, धर्मदेव वेदालंकार की कथाएँ हैं। इस उपन्यास का नायक सुख–दुःख के स्वप्नों में भी खो जाता है, जिससे कथानक अत्यन्त विशाल स्वरूप धारण कर लेता है।

'एक नन्ही किन्दील' उपन्यास में आनेवाले पात्र समाज के मुख्य अंग होते हुए भी व्यक्ति प्रधान हैं। पात्र स्वतः चरम सीमा पर पहुँच जाते हैं, उन्हें उभारने की आवश्यकता नहीं होती। प्रत्येक पात्र मुख्यतः मध्यमवर्ग से संबंधित है। पात्रों के संवाद के द्वारा ही मध्यमवर्गीय सामाजिक विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। मध्यमवर्गीय व्यक्ति की तरह चेतन के अन्तर्मन में भी अमीचन्द

को देखकर महत्वाकांक्षा जागती है और भविष्य के सपने संजोने लगता है। वह अपने भविष्य की बात पत्नी चन्दा से भी करता हैः ''मैं दो साल में लॉ कर लूँगा और लॉ करते ही सब–जजी के कम्पीटिशन में बैठ जाऊँगा। मैं आज तुम्हे बता देता हूँ कि दुनिया की कोई ताकत मुझे सब जज बनने से नहीं रोक सकती। उसने उत्साह में चंदा के कंधे को थपथपाया, 'कृष्णा का पति यदि डिप्टी कलेक्टर है, तो तुम्हारा पति भी सब–जज होगा।''[22] उपन्यास के पात्र मानव जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं और उन पर परिस्थितियों का पूर्ण प्रभाव लक्षित है। वे समाज के अनरूप ही अपने को साँचे में ढाल लेते हैं।

इस उपन्यास के पात्र सामाजिक सुधार एवं उसके द्वारा सच्चाई पर चलने की आशा की है। नायक चेतन भी उन्हीं पात्रों में से एक है जो सत्यता को प्रकट करने में गौरव समझता है। धर्मजी की नयी पत्नी को देखकर वह कह उठता हैः ''उनके फैशन का पेट भरने में यदि वेदालंकारजी साहित्य वाहित्य छोड़ कोरे व्यावसायिक बन जायें तो मुझे हैरत न होगी। और उन जैसे नौकरशाह तबीयत के साहित्यकार की यही सजा है।''[23] उपन्यास में पात्रों का चरित्र–चित्रण स्वाभाविक सजीव तथा मार्मिक रूप से हुआ है। पात्रों के गुण–अवगुण हम दैनिक जीवन में संपर्क में आनेवाले मनुष्यों में पूर्णतः देख सकते हैं।

'एक नन्हीं किन्दील' उपन्यास के कथोपकथन स्वाभाविक एवम् प्रभावोत्पादक है। 'कथोपकथन द्वारा उपन्यासकार पाठक को अपने पात्रों के विषय में विविध जटिल परिस्थितियों तथा अन्तर्द्वन्द्व सम्बन्धित इतना प्रत्यक्ष बोध कराता है, जो अन्य किसी माध्यम से सम्भव नहीं। कथोपकथन के द्वारा उपन्यासकार अपनी कृति के चरित्रों की व्याख्या करता है और उन्हें विकास की ओर अग्रसर करता है।''[24]

'एक नन्हीं किन्दील' में चंदा के पिता को पागलखाने में रखा गया है तब माता के द्वारा पूछे गये प्रश्न संवाद के रूप में कितने सहज बन पड़े हैं।

चंदा की माँ ने पति की ओर संकेत करते हुए पूछाः ''क्यों, इसको पहचानते नहीं?''

''पहचानता क्यों नहीं।'' हँसते हुए पण्डित जी ने कहा।

''भला कौन है यह?''

''मेरी बीवी और कौन है?'' तब चेतन की सास ने उसकी ओर संकेत किया और पूछा, ''भला

यह कौन है?''

''हमारे भाई ही तो हैं। यही तो मुझे पागलखाने में छोड़ गये हैं।''[25]

उपरोक्त कथोपकथन से पता चलता है कि वस्तुतः पागल की क्या दशा होती है। वह किसीको पहचानने की शक्ति नहीं रखता। वह अपनी बेटी को पत्नी और दामाद को अपने भाई समझ बैठता है। वह पत्नी को माँ कहकर पुकारता है। इस उपन्यास के कथोपकथनों के द्वारा तत्कालीन परिवेश तथा वातावरण का सम्पूर्ण चित्रण उभरता है।

प्रस्तुत उपन्यास में अधिकतः कोमल तथा सरस सत्यों का प्रयोग हुआ है। जो भाषा को गति एवम् व्यंजकता देता है। इस उपन्यास में संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, अरबी आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। पंजाबी शब्दों के साथ–साथ पंजाबी मुहावरों का भी प्रयोग किया है। जैसे – ''दो पइयाँ विसर गइयाँ, सदका मेरी दुई दा।''

'एक नन्ही किन्दील' में 'अश्क' ने संस्मरण नया विवरण शैली के साथ डायरी शैली का भी यत्र–तत्र प्रयोग किया है। चेतन जो भी कुछ करता अथवा देखता एवं जिससे भी मिलता है, उस विवरण को घर आकर डायरी में लिख लेता है। वह तत्कालीन परिस्थितियों से पात्रों को अवगत कराना तथा अतीत की बातों को दुहराना भी नहीं भूलता। ''उसने आज़ाद लाल पर लिखा नोट पढ़ा और फिर उसके नीचे लिखने लगा – यह ठीक है कि आदमी दगा–फरेब, बददयानती और रियाकरी से भरी झूठी और दोहरी जिन्दगी जीते हुए समाज में इज़्जत और मान पा लेता है, लेकिन आदमी से जवाब तलब करनेवाला महज समाज ही तो नहीं, उसकी अपनी आत्मा भी तो है।''[26]

'एक नन्हीं किन्दील' में चेतन की जिन्दगी का संघर्ष दिखाया गया है जो निम्न मध्य वर्ग के लोगों का है। चेतन एक ओर तो पत्रकार तथा साहित्यकार के जीवन में से गुजरता है जो अनेक संघर्षों, सपनों, इच्छाओं, महत्वाकांक्षाओं, अन्तर्द्वन्द्वों और उलझनों से पूर्ण है, दूसरी ओर वह अपने वैवाहिक जीवन की समस्या से जूझता है।

कन्दली और कुहासे (गिरिधर गोपाल)

गिरिधर गोपाल कृत 'कन्दली और कुहासे' में स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात् चारों ओर फैले भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, महँगाई आदि के कारण मध्यवर्गीय जीवन में घुटन, कुण्ठा, हताशा, निराशा, दिशाहीनता, अनिश्चितता आदि संवेदनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं, उन सभी का चित्रण इसमें किया गया है।''[27]

प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु लम्बी और विस्तृत है जो मध्यमवर्गीय युवक बिसू से सम्बन्धित है। बिसू के परिवार का प्रमुख आर्थिक समस्या के कारण बिना इलाज ही गुजर जाता है। इसी वजह से बिसू पढ़ाई छोड़कर नौकरी करने लगता है। वह थोड़े पैसे में गुजर कर परिवार का पालन–पोषण के साथ–साथ समस्याएँ सुलझाने का भी प्रयत्न करता है।

बिसू के परिवार का प्रत्येक पात्र आर्थिक विषमता के कारण बिखर रहा है। संजू 'सिर्फ जरुरी चीजें, जैसे कॉपी–किताब, स्याही' ही माँगता है और वह भी बहुत मजबूर होकर।

बच्चों की माँ भी एक–एक कदम सोच–सोचकर उठाती है। सबकी समस्याओं को हुनरपूर्वक सुलझाती है।

प्रस्तुत उपन्यास का मुख्य पात्र किशु है। किशु के माध्यम से मध्यमवर्गीय वर्तमान पीढ़ी की उलझनों का चित्रण किया है। किशु पढ़ाई खत्म होने पर नौकरी के लिए दर–बदर भटकता है। बेकारी और भ्रष्टाचारी की समस्या से वह भी पीड़ित है। इसी वजह से प्रेम में भी रस नहीं ले पाता। इस उपन्यास के सभी पात्र आर्थिक विवशता के साथ–साथ मानसिक असंतुलन के शिकार हैं।

उपन्यास के संवाद सामाजिक और भ्रष्ट राजनीतिक वातावरण के खोखलेपन को उजागर करते हैं। संवाद संक्षिप्त किन्तु कथा को पुष्टि देनेवाले हैं।

''तुमने कितनी जगह अर्जियाँ भेजी हैं, किशु?''

''तीन–चार जगह।''

''मैंने अभी तक एक–सौ सत्तर जगहों के लिए अर्जियाँ भेजी हैं।''[28]

'कन्दली और कुहासे' में संवादों के द्वारा मध्यमवर्गीय परिवार की आर्थिक विषमता के दर्शन होते हैं।

(लड़का) : 'स्कूल जाने के पैसे दो।''

(माँ) : ''खाना तो ले जा रहा है।''

''तो क्या हुआ? सभी लड़के तो पैसे लाते हैं। कोई–कोई तो एक रूपया तक लाता है।

''तू भी तो कल दस पैसे ले गया था?''

''तो आज भी दो।''

''आज तो टूटे पैसे भी नहीं है, बेटे।''[29]

'कन्दली और कुहासे' में आत्मकथा शैली, इन्टरव्यू, पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग हुआ है। उपन्यासकार ने सामाजिक तथा आर्थिक विषमता के द्वारा उत्पन्न विभिन्न समस्याओं को प्रस्तुत किया है। मध्यमवर्गीय लोग बेरोजगारी, महँगाई, गरीबी से ग्रस्त हैं। इन समस्याओं को सुलझाना प्रायः संभव नहीं है। उपन्यासकार भी असमर्थ है, अतः वह पाठक से माफी माँगता हुआ कहता हैः ''पाठक इस उपन्यास के लेखक को क्षमा कर दे भाई। मैंने तुझे कुत्ते की मौत मार डाला। यह तू नहीं है, तेरे जैसे करोड़ों लोगों के कलेजों का टुकड़ा है जो तेरी शक्ल में आज मरा है। मुझे लग रहा है कि मैं खुद अपनी मौत की चर्चा कर रहा हूँ। ऑफ़। कोई कुछ ऐसा करो कि मुल्क के शेष किशू इस तरह की मौत न पाएँ।''[30]

इण्टरव्यू शैली वैसे तो एक नवीनतम शैली है जो साठोत्तरी उपन्यासों में धीरे–धीरे प्रचलित होती जा रही है। 'कन्दली और कुहासे' में गिरिधर गोपाल ने इस शैली का प्रयोग किया है। इस उपन्यास में किशू का इन्टरव्यू स्थानीय डिग्री कॉलेज में राज्यशास्त्र के लिए लिया जाता है।

''आपको कभी थर्ड डिवीज़न नहीं मिला?'' एक मोटे खद्दरधारी ने पूछा जिनके होंठ पान से तर थे और जिनकी गाँधी टोपी उनकी भौहों तक झुकी हुई थी।

''जी नहीं।''

''आप कभी जेल गये थे?''

''जी नहीं।''

''आप कम्युनिस्ट तो नहीं हैं?''

''जी नहीं।''

''गोश्त खाते हैं?''

''जी हाँ।''

''आप कहाँ रहते हैं?''

''लाल बाग में।''[31]

पूर्वदीप्ति शैली का भी इस उपन्यास में सुंदर प्रयोग हुआ है। किशू बचपन की याद में हुसेन गंज पहुँच जाता है। वहाँ की एक तंग गली का मकान उसे आज तक याद है, एक बड़ी हवेली याद है, जिसमें उसका परिवार पहले रहा करता था। एक बड़ी हवेली का पीछे का हिस्सा था वह..।''[32] आँगनवाले तख्त पर बैठकर माँ दाल-चावल बीनती थी, तरकारी काटती थी..। उसी पर बैठकर पिताजी अखबार पढ़ते या दाढ़ी बनाते। माँ ने चूल्हे से जलती लकड़ी खींच ली और धीरे-धीरे आँगन की ओर बढ़ी थीं। उसने भी देखा था कि आँगन की नाली के पास ही एक बड़ा काला साँप रेंग रहा है।''[33] पूर्वदीप्ति शैली के द्वारा घटनाएँ पाठकों के सामने मनोवैज्ञानिक ढंग से आती हैं।

''उपन्यास में वातावरण योजना स्वाभाविक है। कहीं भी आरोपित नहीं लगती। कॉलेज का दूषित वातावरण तथा नीति-हीनता, छात्रों की निरर्थक बहसें, घर का अभावपूर्ण जीवन, नौकरी और बेकारी का वातावरण, अभावग्रस्त भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था, बेरोजगारी, पारिवारिक उलझनें, आदि आज के समाज की विश्रृंखल स्थितियों का चित्रण प्रसंगानुरूप पेश है। साथ ही होटल, सिनेमा, पिकनिक आदि बातों का सम्यक् चित्रण है।''[34]

उपन्यास में लेखक ने सरल भाषा का प्रयोग किया है। अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषा का प्रयोग किया है। संस्कृत के श्लोक का भी कहीं-कहीं प्रयोग किया है। उदाहरणः ''केचित्व दन्त्य मृत मस्ति सुरालयेषु।'' अंग्रेजी भाषा में लेफ. कर्नल, एयर इण्डिया, इण्टरनैशनल, पेशेन्ट, नोवलजीन, इम्पोटेन्ट, क्वश्चन्स, कोर्स, रिवाइझ, डिनर, बर्थ-डे आदि।

'कन्दली और कुहासे' में निम्न मध्यवर्ग के परिवार की विवशताओं का वर्णन किया है।

राग दरबारी - श्रीलाल शुक्ल (1968)

''श्रीलाल शुक्ल कृत व्यंग्यात्मक उपन्यास 'राग-दरबारी' का सम्बन्ध एक बड़े नगर से कुछ दूर बसे हुए गाँव की जिन्दगी से है जो पिछले बीस वर्षों की प्रगति और विकास के नारों

के बावजूद निहित स्वार्थों और अनेक अवांछनीय तत्वों के आघातों के सामने घिसट रही है। यह उसी जिन्दगी का दस्तावेज है।''[35]

शिवपालगंज गाँव में दो नेता हैं – एक हैं वैद्य जी और दूसरे रामाधीन भीखमखेड़वी। इन दोनों नेताओं के अपने–अपने गुट हैं। दोनों के बीच का संघर्ष कथानक का बड़ा हिस्सा रोकता है। वैद्य जी का दल शक्तिशाली है और हर लड़ाई में वह विजेता होते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में रंगनाथ मुख्य पात्र के रूप में है। उपन्यास में जितने पात्र हैं उतनी कथाएँ हैं। डॉ. रामदरश मिश्र का कथन हैः ''राग–दरबारी का लेखक एक ही साथ कई–कई विसंगतियों को गूँथता चलता है और इस प्रकार प्रसंगों को सहज भाव से कथा में जोड़ देता है। इस तरह लेखक अनेक कथाओं और प्रसंगों की अवतारणा किये बिना ही उसके प्रभाव को व्यंजित कर देता है। ये उपमाएँ इसीलिए सामाजिक जीवन के अनेक क्षेत्रों से ली गई हैं। लेखक की यह शैली जहाँ उसके कथा–विन्यास और अभिप्रेत प्रभाव रचना में अद्‌भुत योग देती है, वहीं कभी–कभी उसकी आरोपित व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति के कारण हल्की और अनावश्यक प्रतीत होती है।''[36]

प्रस्तुत उपन्यास में वैद्य जी की मुख्य कथा के साथ–साथ अनेक सहायक कथाएँ चलती हैं। जैसे– रंगनाथ का शिवपालगंज जाते हुए ट्रक ड्राइवर के साथ झगड़ा, छंगामल विद्यालय इण्टर कॉलेज की कथा, वैद्यजी का दरबार, शनीचर का ग्राम प्रधान बनने की कथा, जोगनाथ का मुकदमा का प्रसंग, लंगड की कथा, बेला के प्रेम की कथा, कॉलेज की गुटबन्दी का चित्र आदि गौण कथाएँ कथावस्तु का फलक विस्तृत बनाते हैं। कथावस्तु की विराटता, चरित्रों की विपुलता एवं भाषा का औदात्य देखने को मिलता है।

उपन्यास के चरित्र–चित्रण में विभिन्न वर्गों के विविध पात्रों का निरूपण किया गया है। वैद्यजी, बद्री पहलवान, रुप्पन, सनीचर, गयादीन, प्रिंसिपल, मास्टर मोतीराम, जोगनाथ, बाबु रामाधीन भीखनखेड़वी, खन्ना मास्टर आदि विविध पात्रों का समावेश हुआ है।

पात्रों में मुख्य वैद्यजी हैं। वैद्य जी सारे गाँव की प्रगति और विकास के प्रवर्तक तथा संरक्षक हैं। वैद्यजी अधिक शक्तिशाली नेता और ठेकेदार हैं। जो वैद्य कम और राजनैतिक नेता के रूप में उनका चरित्र अधिक उजागर हुआ है। वैद्यजी का न कोई नैतिक आदर्श है न इमान। ''स्वातन्त्र्योत्तर काल में व्याप्त की वैद्यजी जीती जागती तस्वीर हैं।''[37] गाँव में एकमात्र साम्राज्य

है, चाहे को–ऑपरेटिव युनियन हो या गाँव सभा, छगांमल विद्यालय इण्टरमीडिएट कॉलेज हो या गाँव की उन्नति का प्रश्न।

इस उपन्यास का दूसरा महत्वपूर्ण पात्र रंगनाथ है जो शिवपालगंज में संशोधन कार्य के साथ–साथ गर्मियों की छुट्टियाँ बीताने आया है। ''रंगनाथ हमारे देश के निष्क्रिय बुद्धिजीवियों का प्रतिनिधित्व करता है, जो विवेकशील होते हुए भी विरुपताओं के प्रति मौन–तटस्थ बना रहता है। रंगनाथ और खन्ना माननीय प्रिंसिपल और वैद्यजी का सीधे–सीधे शिकार बनते हैं। रंगनाथ इसका विरोध करना चाहते हुए भी विरोध नहीं कर पाता। रंगनाथ शिवपालगंज की नग्न और कटु स्थितियों को देखता है, लेकिन उनके कारक तत्वों के साथ संघर्ष नहीं कर पाता। आखिर यह बुद्धिजीवी इन स्थितियों से बचने के लिए शिवपालगंज से पलायन करता है।''[38]

प्रधान पात्रों के साथ–साथ कुछ गौण पात्र भी हैं, जो अपने–अपने ढंग में आकर्षक हैं। बद्री पहलवान पहलवानी करने के साथ–साथ गुंडों के आश्रयदाता बेला का असफल प्रेमी और पिता, वैद्य जी के प्रत्येक अनुचित कार्य का सहभागी है। सनीचर वैद्यजी का भाँजा और चेलों का मुखिया प्रधान सेवक और उनकी प्रत्येक परोक्ष–अपरोक्ष क्रियाओं का हिस्सेदार यह वैद्यजी की कृपा से ही शिवपालगंज का प्रधान बनता है। रुप्पन बाबु छगांमल विद्यालय का विद्यार्थी कम और युनियन में नेतागीरी का कार्य ज्यादा करनेवाला है। जोगनाथ गुण्डा और वैद्य जी तथा बद्री पहलवान का पालक बालक है। चलते मुसाफिरों से रुपया–पैसा छीन लेना उसके बांये हाथ का खेल है। यहाँ तक कि पुलिस भी उसे पकड़ने से घबराती है। इनके अलावा मोतीराम, खन्ना मास्टर, गयादीन, कुसहर प्रसाद, कालिका प्रसाद,लंगड आदि कई गौण पात्र हैं जो किसी न किसी रूप में समकालीन जिन्दगी की सच्चाई को उजागर करते हैं।

बेला उपन्यास में एक मात्र स्त्री पात्र है जिसके माध्यम से लेखक ने मध्यमवर्गीय समाज में प्रवर्तमान प्रेम–विवाह, दहेज समस्या आदि को उजागर किया है।

'राग–दरबारी' उपन्यास की संवाद योजना और भाषिक संरचना पात्रानुकूल एवम् व्यंग्यपूर्ण है। संवाद योजना आकर्षक एवम् सहज है। ''श्रीलाल शुक्ल ने शिवपालगंज तथा शिवपालगंजीय प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन अपना उद्देश्य समझा है। अतः मनुष्य के मन के भीतर छिपे हुए सूक्ष्म पहलुओं को संवादों के माध्यम से ही उद्‌घाटित कर खोखले मनुष्य के कृत्रिम रूप को उजागर किया है।''[39]

भाषा के साथ–साथ लेखक ने संवाद में भी रूपक का प्रयोग किया है। रंगनाथ ने कहा: ''तुम्हारा साहब तुम्हारा गियर तो बिलकुल अपने देश की हकूमत जैसा है।'' ड्राइवरने मुस्कुरा कर यह प्रशंसापत्र ग्रहण किया। रंगनाथ ने अपनी बात साफ करने की कोशिश की। कहा, ''उसे चाहे जितनी बार आप गियर में डालो, दो गज चलते ही फिसल जाती है और लौटकर अपने खाँचे में आ जाती है।''[40]

संवाद और वर्णन की भाषा में एकरूपता लाने का प्रयास किया है। अवध प्रान्त की लोकभाषा का लेखक ने संवाद में अच्छा प्रयोग किया है।

''कहां लपक गये?'' पहलवान ने लापरवाही से चबूतरे पर थूक दिया। कहा, ''बद्री भैया, मीटिंग में बैठकर क्या अंडा देंगे? सुपरवाइज़र को पकड़कर एक धोबीपाट मारते उसी में साला टें हो जाता। मीटिंग–शीटिंग से क्या होगा। रंगनाथ को बात पसंद आ गई। बोला, क्या तुम्हारे यहाँ मीटिंग में अण्डा दिया जाता है? पहलवान इधर से किसी सवाल की आशा नहीं थी, उसने कहा– 'अण्डा नहीं देंगे तो क्या बाल उखाड़ेंगे। सब मीटिंग में बैठकर रांडों की तरह कांय–कांय करते हैं, काम–धाम के वक्त खूँटा पकड़कर बैठजाते हैं।''[41]

'राग–दरबारी' में संवाद पात्रों की स्थिति और कथा–विकास में सहाय–रूप बन पड़े हैं। ''लेखक ने इस उपन्यास में पात्रों के बहिरंग के साथ अन्तरंग को भी संवादों द्वारा प्रस्तुत किया है। प्रिंसीपल के व्यक्तित्व की आंतरिक पीड़ा, विवशता संवादों के माध्यम से ही व्यक्त हुई है। उपन्यास के सभी पात्र रुप्पन, वैद्य, गयादीन, खन्ना, सनीचर, लंगड, रंगनाथ आदि का व्यक्तित्व अधिकांशतः संवादों के जरिये स्पष्ट होता है।''[42] वैद्यजी के संवाद लम्बे लेकिन सोद्देश्यपूर्ण हैं। कुछ संवाद छोटे और स्वाभाविक हैं।

'राग–दरबारी' में पत्र शैली, इण्टरव्यू शैली का लेखक ने प्रयोग किया है। प्रिंसिपल, वैद्यजी शाहजादों के किस्से कहते हैं तब पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग दिखाई देता है। ''उनकी आदत थी कि सीधी बात को भी घुमा–फिरा कर कहते थे। उन्हें लोग विद्वान समझते थे।''[43]

'राग–दरबारी' में बेला रुप्पन को प्रेमपत्र लिखती है: ''तुम्हें क्या पता कि तुम्हीं मेरे मन्दिर, तुम्हीं मेरी पूजा, तुम्हीं देवता हो,... मेरी बदनामी हो रही है और तुम चुपचाप बैठे हो।''[3]. यहाँ बेला की मनोस्थिति का खयाल आता है।

श्रीलाल शुक्ल कृत 'राग–दरबारी' में इण्टरव्यू पद्धति के द्वारा वैद्यजी का चरित्रांकन किया है। वैद्यजी गाँव के सभी लोगों के साथ इण्टरव्यू शैली से बातें करते हैं। वैधजी के साथ–साथ गयादीन भी कॉलेज समिति के उपसभापति होने के नाते वह भी कॉलेज में मास्टर वर्ग के साथ इन्टरव्यू पद्धति से बातें करते हैं।

गयादीन खन्ना मास्टर के साथ चर्चा करते हुए कहता हैः "गयादीन वैसे ही कहते गये, मसखरी की बात नहीं। यह आज का युगधर्म है, जो सब करते हैं, वही प्रिंसिपल भी करता है। कहाँ ले जाये बेचारा अपने रिश्तेदारों को?" ठीक उसी तरह जोगनाथ के मुकदमे में अदालत बैजनाथ का इन्टरव्यू ले रही है):

(वकील) : "आज से छः महिने पहले तुमने सरकार बनाम बिसेसर के मुकदमे में सबूत की ओर से गवाही दी थी?"

(बैजनाथ) : "नहीं"।

"साल भर पहले तुमने सरकार बनाम छुन्नू के मदद में गवाही दी थी?"

"नहीं।"

"..।"

"नहीं।"[45]

'राग–दरबारी' में पात्रानुकूल एवम् प्रसंगानुरूप भाषा का प्रयोग किया है। संकेतों और बिम्बात्मक दृश्यों की भी भरमार है। रूपक, उपमा, मुहावरे, टीकाएँ आदि का प्रयोग भाषा को नवीनतम रूप प्रदान करता है। आम जन जीवन से जुड़ी हुई है। अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत आदि भाषाओं का भी उपन्यास में प्रयोग किया गया है। कहावत का एक उदाहरण देखिएः "अखाड़े का लतमरुजा भी पहलवान हो जाता है।"[46]

"इधर से आग खाओगे तो उधर से अंगारे निकालोगे।"[47] इसी तरह मुहावरे का प्रयोग भी उपन्यास में यत्र–तत्र दिखाई देता है। "अन्धेरे–उजेले में'[48], 'आसमान में बाँस खोसना'[49], 'असल बाप की औलाद होना'[50], आदि। उपमान का उदाहरण देखिएः "गले के नीचे दो ऊँचे–ऊँचे पहाड़"[51] यहाँ 'उरोज' उपमेय के लिए यह उपमान प्रयुक्त किया गया है। नये विशेषण का भी प्रयोग किया गया है। जैसेः अवकाश प्राप्त ब्रुश (पृ. 397), हत्याभिलाषी ट्रक (पृ. 338) इत्यादि।

अंग्रेजी शब्दों के अंतर्गत : 'मेटाफर, इवैल्युएशन, फ्रोड़, च्यूइंगम, आर्टिफिशल इन्सेमिनेशन।'[52]

इस उपन्यास में लोककथा शैली, व्यंग्यात्मक शैली, आंचलिक शैली और विश्लेषणात्मक शैली का भी प्रयोग हुआ है। ''आज के राजनीतिक सामाजिक एवं नैतिक अवमूल्यन का, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद का, गिरते मानवीय मूल्यों का सम्यक् चित्र इस उपन्यास में सफलता के साथ प्रस्तुत है।''[53]

अमृत और विषः अमृतलाल नागर

अमृतलाल नागर कृत 'अमृत और विष' मध्यमवर्गीय समाज के विविध आयामों को उद्घाटित करता है। इस उपन्यास की एक अनोखी विशिष्टता यह है कि उपन्यास के भीतर उपन्यास है। एक उपन्यास तो आत्मकथात्मक है, जिसमें उपन्यासकार ने अरविन्दशंकर के रूप में स्वयं अपने उपन्यासकार की कल्पना की है। दूसरा उपन्यास वह है जो स्वयं अरविन्दशंकर लिखता है। अरविन्दशंकर के व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन की कथा है। अरविन्द शंकर के पारिवारिक जीवन में अनेक समस्याएँ हैं। सबसे बड़ा पुत्र आत्माराम है, जो परिवार के पालन–पोषण के अलावा आगे कुछ भी नहीं सोचता। दूसरा पुत्र मनमाना विवाह करता है, पढ़ाई–लिखाई और नौकरी का कैरियर चौपट कर देता है। तीसरा पुत्र महत्वाकांक्षी होता है, लेकिन आत्महत्या कर लेता है। पुत्री अनुचित मार्ग अपनाती है। पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी में जो वैचारिक मतभेद हैं, उसका अनुभव खुद अरविन्दशंकर करता है। इस उपन्यास में रमेश और लच्छू का भी वर्णन है। इस उपन्यास में मध्यवित्तीय परिवार के जीवन तथा वहाँ की वैवाहिक रीत–रस्मों का परिचय रमेश की बहन की शादी के प्रसंग में देखने को मिलता है। रमेश बाल विधवा रानी की ओर आकृष्ट होता है। दोनों ही परिश्रमी और स्वावलम्बी हैं। समाज के प्रगतिशील व्यक्ति उनके स्नेह सम्बन्ध का स्वीकार करते हैं और दोनों का प्रेम लग्न–बंधन में परिणत होता है।

कथा शैली की दृष्टि 'अमृत और विष' में आत्म–कथात्मक, डायरी और वर्णनात्मक शैली का प्रयोग मिलता है।

'अमृत और विष' उपन्यास का प्रारंभ अरविन्द शंकर की आत्मकथा से ही शुरु होता है। ''ऐन कानों के पास अलार्म इतनी जोर से धनधना उठी कि कानों ही के क्या, मेरे अनन्तर तक

के पर्दे हिल उठे।''[54]

''.... आत्मकथा के संक्षिप्त नोट्स लिखते-लिखते सम्भव है मेरी सरस्वती फिर से जाग उठे और उपन्यास भी आरम्भ हो जाये।''[55]

डायरी शैली का भी प्रयोग आत्मकथा का निरूपण करते हुए अरविन्द शंकर ने किया है। डायरी का एक उदाहरणः ''लेकिन आई.ए.एस. के इण्टरव्यू में अपनी सफलता निश्चित करने के लिए सरकार विरोधी पिता से अलग होने का निश्चय करने के लिये उसे शायद एक पल भी न लगा होगा। वाह री स्वार्थी दुनिया। स्वारथ के लिये बेटा बाप को भी त्याग सकता है।''[56]

'अमृत और विष' के संवाद में संक्षिप्तता, स्वाभाविकता, प्रसंगानुकूलता, सजीवता जैसे आवश्यक गुण दृश्यमान हैं। संवादों के साथ-साथ कथावस्तु में यत्र-तत्र उर्दू, अंग्रेजी, ग्रामीण आदि भाषाओं का प्रयोग होता है।

(लाल साहब): ''सर शोभाराम ने लाख उस मेम से शादी की मगर दि से रखैल ही माना। यह शौहर की कौम साली होती बदजात है।'' इसी तरह अंग्रेजी के भी कुछ शब्द संवादों में देखने को मिलते हैं, जैसे - हाय, एबाउट, इंडोर गैम्स, कम फ्राम, ट्रेजेडी।

डॉ. भारतभूषण अग्रवाल का कहना है कि''उनके इस प्रयोग की सार्थकता यही है कि उसके माध्यम से बाह्य शब्दाडम्बर के नीचे दमित वस्तु स्थिति का अभियान कराने में समर्थ हो जाते हैं। नागरजी ने जिस दुहरे दृश्य की कलायुक्ति को अपनाया है, वह ऐसे ही किसी उद्देश्य में अपनी सार्थकता पा सकती थी... ऐसी किसी सार्थकता के अभाव में ये दो स्तर एक ही सत्य के दो आयाम नहीं बन पाते, वरन् दो असम्बद्ध कथा-सूत्र ही बने रह जाते और उपन्यास में जो अतिरिक्त प्रभाव की संभावना थी, वह प्रतिफलित नहीं हो पाता।''[57]

'अमृत और विष' मध्यमवर्गीय मानव जीवन के विविध पक्षों और स्तरों को बखूबी उभारता है। ''उपन्यासकार ने युग के सर्वागीण जीवन को मथकर अमृत और विष- ये दो रत्न निकाले हैं।''[58]

मछली मरी हुई – राजकमल चौधरी

'मछली मरी हुई' उपन्यास में शीरी और प्रिया के माध्यम से लेखक ने समलैंगिक यौनाचारों में डूबी नारियों का चित्रण किया है। शीरी के मन में पुरुष के प्रति विरक्ति के पीछे उसकी गलतफहमी कारणभूत है। माता–पिता के मृत्यु के पश्चात् दोनों बहनें एक साथ रहती हैं। शीरी की माँ ने एक बार बताया था कि हर पुरुष जंगली जानवर होता है और उसके आगे स्त्री को झुकना पड़ता है। बहन ने भी एक बार बताया था कि पिताजी के पास लेटने से माँ के पेट में बच्चा आया था और इसी कारण माँ मर गई। इसी कारण शीरी पुरुष के सम्पर्क से दूर रहती है।'' ''शीरी को अपने पिता से नफरत हो गई। पिता से, दुनिया के हर मर्द से। वह अपनी बड़ी बहन को प्यार करने लगी। किसी मर्द को नहीं। किसी दिन नहीं।''[59]

उपन्यास का नायक निर्मल व्यापारी है। निर्मल पूँजीवादी माहौल से सम्बन्ध रखता है। ''निर्मल एक पूँजीपति है, वह सफेद और हरे रंग के लम्बे लम्बे टुकड़ों पर चार्ट बनाता था। चार्ट, ग्राफ और डायाग्राम।रेखआओं से और अंकों से। सीधी टेढ़ी लकीरों से लगातार शतरंज। कागजी योजनाएँ, कम्पनी, आदि।''[60]

प्रिया इस उपन्यास की नायिका है जो शीरीं से समलैंगिक संबंध स्थापित कर चुकी है। निर्मल पदमावत जो जीवनभर नपुंसक रहा है, प्रिया के साथ बलात्कार करता है। डॉ. रघुवंश प्रिया के पिता स्वयं अपने हाथों से प्रिया की मरहम पट्टी करते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में सभी पात्र असाधारण हैं।

''मछली मरी हुई' में फ्लेशबैक शैली, वर्णनात्मक शैली, प्रतीकात्मकता का प्रयोग हुआ है। 'मछली मरी हुई' में मरी हुई मछलियाँ, लिस्बियन स्त्रियों का प्रतीक हैं। 'मछली मरी हुई' की कथा संक्षेप एवम् गूढ़ है। प्रतीकात्मक भाषा के द्वारा विकृत मनो आवेगों को वाचा दी है। ''राइफल की नली शिश्न का प्रतीक जो प्रिया के साथ संभोग के संदर्भ में प्रस्तुत है। शीरी की मानसिक ग्रन्थि भी ऐसी ही प्रतिकात्मक भाषा में है। वह सपना देखती है कि आदमी जानवर बनकर उसे अपने विशाल सींगों पर उठा देता है। यहाँ जानवर का सींग शिश्न का प्रतीक है। सम्पूर्ण उपन्यास में सेक्स से सम्बन्धित शब्द और प्रतीक छाये हुए हैं।''[61]

संवादों में एक रहस्य छुपा रहता है जो कथावस्तु के आगे चलने से रहस्य को उद्घाटित

करता है। यह युक्ति बडी ही समर्थ और आकर्षक बन पड़ी है। वाक्य छोटे और अभिव्यंजक है। यहाँ तक कि संवाद की भाषा भी अभिव्यंजना के स्तरों को उजागर करती है। ''और वह अपने ऊँचे और मजबूत कंधों पर विशालकाय दैत्य की तरह शव उठाये था। क्षितिज के लाल, जलते हुए शमसान की ओर अकेला चला जा रहा था।''[62]

'कला संचेतना और भाषा के खुले प्रयोगों ने इस कृति के शिल्प कौशल को जो दिशा दी है, वह नई पीढ़ी के लिए नई चीज़ है। वैयक्तिक बोध और सहज अभिव्यक्ति का टकसाली रूप राजकमल के उपन्यासकार को दौड़ में बहुत आगे कर देता है।''[63]

'मछली मरी हुई' उपन्यास में संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू आदि भाषाओं का प्रयोग हुआ है। उर्दू शब्द में 'बहशी, धून, दास्ताने, हम्जा', अंग्रेजी शब्द में 'स्काई स्क्रैपर, मान्टोक्रिस्तो, ब्रेन ट्यूमर' आदि शब्दों का प्रयोग किया है। कहावत और मुहावरे का भी प्रयोग किया है। मुहावरे का एक उदाहरण दृष्टव्य है। जैसेः 'बिस्तरा ठण्डा होना'[64]। 'मछली मरी हुई' उपन्यास में लेखक ने नये उपमान, विशेषण, रूपक, सूक्तियाँ आदि का भी प्रयोग किया है। जैसे 'औरत की देह' उपमेय 'अकेलेपन की दीवारें तोड़ने का बहाना'[65], कलकत्ता उपमेय 'घूस के रूपयों का शहर'[66] उपमान के लिए प्रयुक्त हुआ है। 'योनि' उपमेय 'बिजली की गर्म भट्ठी' उपमान के लिए प्रयुक्त हुआ है। ठीक उसी तरह कुछ विशेषण के उदाहरण दृष्टव्य हैं। 'आबनूसी व्यक्तित्व, मध्यकुलीन पत्नियाँ, टेलीपेथिक इशारा, वहशी, धुन।''[67]

'मछली मरी हुई' उपन्यास की सफलता का आधार कथावस्तु के साथ-साथ उसके शिल्प को भी जाता है।

कुछ चर्चित साठोत्तरी गुजराती उपन्यासों का संरचनात्मक वैशिष्ट्यः

उपन्यास 'अमृता':

चरित्र-प्रधानता के लिए रघुवीर चौधरी द्वारा लिखित 'अमृता' उपन्यास साठोत्तरी गुजराती साहित्य का दस्तावेजी उपन्यास माना जाता है। वैयक्तिक स्वातंत्र्य पर केन्द्रित उपन्यास की कथा पाठक का मनोमंथन करती है।

कथानक की पृष्ठभूमि में तीन पात्रों (अमृता, उदयन और अनिकेत) के माध्यम से लेखक ने आत्म संघर्ष की प्रक्रिया को समेटा है। परंपरागत मूल्यों की परम्परा की टूटन के साथ ही साथ नए आधुनिक मूल्यों में सर्वाधिक रूप से व्यक्ति को 'स्वातंत्र्य' मूल्य ने प्रभावित किया। आधुनिक पीढ़ी के लिए स्वतंत्रता का प्रश्न ही सर्वोपरि बना, नारी और पुरुष दोनों के संदर्भ में। इस प्रकार सातवें दशक की इस महत्वपूर्ण कृति में पाश्चात्य अस्तित्ववादी विचारधारा के सांनिध्य में 'स्वातंत्र्य चेतना' सर्वोपरि बनी जो उपन्यास की संरचना की केन्द्रिय भूमि रही।

प्रश्न यह है कि स्वतंत्रता किसे? और किस हद तक? दार्शनिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ यहाँ बौद्धिक वर्ग को झकझोरा है। अमृता के मन में एक ही प्रश्न विचलित करनेवाला रहा- ''शुं पुरुष अने स्त्री माटे स्वातंत्र्यनो अर्थ अेक नथी?''[68] (क्या पुरुष और स्त्री के लिए स्वतंत्रता का अर्थ अेक नहीं?'')

उपन्यास की कथा में तीनों पात्र अंतरंग मित्र हैं। आंतरिक संबंधों में लगाव के साथ ही साथ कई बार परस्पर वैचारिक मतभेद भी उपस्थित होते हैं, इसका कारण ही तीनों बुद्धिजीवी अपनी-अपनी स्वतंत्रता को बनाए रखना चाहते हैं। उपन्यास का कथानक काफी विस्तृत है, लेखक ने इसे तीन खण्डों में विभाजित किया है- प्रश्नार्थ, प्रतिभाव और निरुत्तर।

पात्र उदयन गुजराती विषय का प्राध्यापक है। वह अपनी शिष्या अमृता को बेहद चाहता है। साथ ही अपने मित्र अनिकेत को भी, जो विज्ञान का प्राध्यापक है। अस्तित्ववादी दर्शन से प्रेरित उदयन की जीवन दृष्टि केवल वर्तमान को ही सत्य मानती है, उसके अनुसार वर्तमान कभी पूर्ण नहीं है फिर भी अपने समय और असंतोष को वह पूरी लगन के साथ मरने तक जीता है। वह स्वतंत्रतावादी होने के बावजूद अपने व्यक्तित्व को बचाने की कोशिश करता है। साथ ही दूसरे के व्यक्तित्व की उपेक्षा भी करता है। जैसे एक बार गुस्से में अमृता का ब्लाउज फाड़ देता है और कहता हैः ''हा, मारा संवेग प्रबळ हशे तो तारो भोग लेशे ज, तारा पर नियंत्रण भोगवशे, प्रेममां बीजानी स्वतंत्रता जोखमाय छे।''[69] (हाँ, मेरे संवेग प्रबल होंगे तो तेरा भोग लेंगे ही। तुझ पर नियंत्रण भी भोगेंगे, प्रेम में दूसरे की स्वतंत्रता का हनन होता ही है।)

उदयन अत्यधिक आत्मनिर्भर और स्वतंत्र होता जाता है जिससे अन्ततः आत्मविलोपन ही उसका अंतिम परिणाम सिद्ध होता है। वह अमृता को नहीं अपना पाता। उसके अनुसारः

''समजथी नजीक आवेला साथे रही शके, प्रेम तो आकस्मिक कहेवाय, जेना ऊपर मारुं नियंत्रण नथी तेने पामवाथी शुं?''[70] (समझकर करीब आनेवाले ही साथ रह सकते हैं, प्रेम तो आकस्मिक होता है, जिस पर मेरा नियंत्रण नहीं, फिर उसे पा लेने से क्या?)

पात्र अनिकेत वर्तमान की बजाय भूत और भविष्य में विश्वास करता है। वर्तमान को वह संशय और भ्रम के सिवाय कुछ नहीं मानता क्योंकि उसका मानना है कि मनुष्य सारी जिंदगी गुजरी स्मृतियों के सहारे और भविष्य की प्रतिक्षा में आसानी से गुजार देता है। स्वातंत्र्य विचारों के तहत वह केवल 'होने' को महत्वपूर्ण मानता है न कि 'बनने' (घटना) को। अतः वह संशयात्मक्ता मानता है। अतः अमृता को चाहकर भी वह उसे अपना नहीं पाता।

मुख्यपात्र 'अमृता' के अनुसार वर्तमान, भूत और भविष्य जैसा कोई विभाजन जीवन के लिए नहीं है। वह समय को अखण्ड और शाश्वत मानती है। परंतु फिर भी न तो वह उदयन का स्वीकार कर पाती है और न ही अनिकेत का। दोनों में से किसे चुने? अंत तक वह इस बात का निर्णय नहीं कर पाती।

''तमारा बंनेनी चड़सा–चड़सीमां मारा माटे वरणीनी स्वाधीनता जेवुं कशुं होय नहि। .. हुं पोतानी रीते पोताने अने अन्यने समजवा स्वतंत्र नथी?''[71] (तुम दोनों के चुनाव की कश्मकश में मेरे लिए चुनाव की स्वतंत्रता जैसा कुछ नहीं... मैं स्वयं के तरीके से खुद को और दूसरों को समझने के लिए स्वतंत्र नहीं?)

अतः स्वतंत्रता प्रेमी अमृता भी अंत में हृदय परिवर्तन के साथ अपने परिजनों के बीच ही जाना चाहती है क्योंकि वह कहती हैः ''मारे स्वातंत्र्य नथी जोइतुं, संवादिता जोइअे छे, स्नेह जोइअे छे।''[72] (मुझे स्वतंत्रता नहीं चाहिए, संवादिता चाहिए, प्रेम चाहिए।)

अंत में पात्र अनिकेत को भी लगता है कि प्रेम भ्रम नहीं हैः ''प्रेम मृत्यु ऊपर पण विजयी नीवड़े छे।''[73] (प्रेम मृत्यु पर भी विजयी सिद्ध होता है।) उपन्यास को लेकर आलोच्यदृष्टा नगीनदास परीख कहते हैंः ''अे प्रेमीमांथी प्रेम बनवानी महेच्छा सेवे छे, बीजी रीते कहीअे तो अे आत्म विस्तार करी भूमानी साधना करवा मथतो माणस छे. अेटले उदयनना प्रमाणमां अेनुं चित्त वधारे स्वस्थ, निर्मळ अने कड़वाशथी मुक्त रही शक्युं छे।

त्रणे पात्रो संनिष्ठ होवा छतां त्रणेने पोतानां ग्रहो अथवा आग्रहोने कारणे आकरी तापणीमांथी

पसार थवुं पडे छे ने त्रणे अंते जतां विशुद्धतर बनी बहार पड़े छे।''[74]

(वह प्रेमी में से प्रेम बनने की अकट्य इच्छा को बचाता है। दूसरे तरीके से कहें तो वह आत्म विस्तार करके हृदय की साधना कर, मंथन करता हुआ मनुष्य है। इसलिए उदयन के प्रमाण में उसका (अनिकेत का) हृदय अधिक स्वस्थ, निर्मल और कड़वाहट से मुक्त रह सका है।

तीनों पात्र संनिष्ठ होने के बावजूद तीनों के अपने ग्रहों–आग्रहों की वजह से कड़ी कसौटी में से गुजरना पड़ता है। और अंत में स्वयं ही उदात्त बनकर प्रकट हुए हैं।) इन पात्रों में प्रेम की उदात्तता का स्वीकार मिलता है। उपन्यास की सुन्दर प्रस्तुति के लिए रघुवीर चौधरी ने विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है जैसे–

वर्णन शैली : ''खाली पड़ेला बेठक रूममां हवे फक्त पंखानी गति हती अने अहीं ऊपर फरता पंखानी गति संभळाती हती, जमतां–जमतां कंई वात थई नहि, नोकरनी इच्छा हती के आजे बाबूजीने बहु आग्रह करी–करीने जमाड़शे।''[75]

(खाली पड़े बैठक रूम में अब केवल पंखे की गति थी और ऊपर घूमते पंखे की गति की आवाज सुनाई दे रही थी। खाना खाते कोई बात नहीं हुई। नौकर की इच्छा थी कि आज बाबूजी को बहुत आग्रह करके खाना खिलायेगा।)

पत्र शैलीः ''अक्षर भाभीना छे; अेणे कवर फाड्युं – बे पुरुषो साथे तमारो आ प्रकार नो संपर्क आपणा परिवारनी प्रतिष्ठाने छाजे तेवो नथी.. तमे आ अंगे विचार करशो अेम विनंती छे।''[76] (अक्षर भाभी के हैं। उसने कवर फाड़ा – दो पुरुषों के बीच तुम्हारा ऐसा संपर्क परिवार की प्रतिष्ठा के योग्य नहीं, तुम इस विषय में विचार करना, ऐसी विनती है।)

कई बार पात्र स्वगत बातचीत करते हैं। उपन्यास की पात्र 'अमृता' जब दोनों प्रेमियों के बीच का चुनाव का निर्णय नहीं कर पाती तो स्वतः ही स्वयं से कथन करती है–

स्वगत कथन शैली : ''कर्तव्य कहे छे के उदयन... अभिरूचि कहे छे के अनिकेत.. रुचि अने कर्तव्य अेक होत तो केवुं सारुं।''[77] (कर्तव्य कहता है उदयन... अभिरूचि कहती है कि अनिकेत.. रूचि और कर्तव्य दोनों एक होते तो कितना अच्छा!)

पात्र प्रतीक शैली के माध्यम से भी अपने प्रेम के विचारों को रखने में सफल हुए हैं। जैसे अनिकेत सोचता हैः

प्रतीकात्मक शैलीः ''अेणे खंडित चश्मा टेबल पर मूक्यां, विचार आव्यो के आ रंगीन काच मारी अने अमृता वच्चे छे।''[78] (उसने टूटा हुआ चश्मा टेबल पर रखा, विचार आया कि ये रंगीन काँच मेरे और अमृता के बीच है।)

उपन्यासकार पौराणिक शैली के प्रयोग से भी नहीं चूकता, साथ ही साथ मुहावरेदार शैली के प्रयोगों में भी उसे सफलता मिली है। अनिकेत अमृता से लिफ्ट में खड़े हुए कहता हैः

पौराणिक शैलीः ''न ओळखे तो अेम माने के विश्वामित्रनो पेलो कृपापात्र त्रिशंकु धरतीनी कोई परीने सोचलई ने स्वर्ग तरफ उपड्युं छे, वच्चे अटकशे।''[79] (नहीं पहचानेंगे तो ऐसा मान लेंगे कि विश्वामित्र का कृपापात्र त्रिशंकु धरती की किसी परी को लेकर स्वर्ग की ओर प्रस्थान कर रहा है, बीच में पहुँचकर अटकेगा।)

तीनों बुद्धिजीवी पात्रों के मध्य संवाद रोचक और वैचारिक दोनों हैं। शब्दों के तौर पर उपन्यासकार ने अंग्रेजी, संस्कृत, तद्भाव, देशज और मुहावरे आदि का प्रयोग किया है। जो निम्न प्रकार से है।

अंग्रेजी शब्द : कॉलेज, गोगल्स, सिच्युअेशन, फोर्स, इन्जेक्शन, ड्राइवर, कंटक्टर, टिकिट, सर्विस टाइम आदि।

संस्कृत शब्दः प्रतिष्ठा, वृक्ष, अभिरूचि, लाभ, नीरव, आत्मवंचना, चित्त, मिथ्या, जीर्ण, निर्भिक, वक्र आदि।

तद्भव शब्दः अवाज, कान, आँख, लागणी, कल्पी, रजा, सर्जक, अटक, धुँधकर, समज, परम दिवस आदि।

देशज शब्द : भोंयतळियुं, बरडा, बरछट, लुछ्या, गजवा, ढूँढा, चड़साचड़सी, उमळको, झूंखी, अकळाय, तूराश, अभ्या, झांझा, टोटो, माठा आदि।

मुहावरे प्रयोग : आंख आड़ा कान, आकाश–पाताळ अेक करवुं (पृ. 125) आदि।

समीक्षक बाबु दावलपुरा इस कृति के विषय में कहते हैंः

''चरित्रजगत मनःस्थितिओ, परिस्थितिओना आवा कल्पन समुद्र आलेखनमां लेखकनी कल्पकला अने कलाकीय समानतानी प्रतीती मळी रहे छे। चरित्र सर्जन तथा वस्तुसंयोजनमां तरी आवती अमुक विसंगतिओ, संवाद गद्यनी असाहजिकता तेमज वर्णन–कथन संवादगत दीर्घसूत्रता

निवारी शकाई होय तो आ विचारकथा वधु संतर्पक अने प्रभावक बनी शकी होत।''[80]

(चरित्रगत मनःस्थितियों और परिस्थितियों की ऐसी विस्तृत कल्पना से लेखक की कल्पनापूर्ण एवं कलापूर्ण सचेतता ज्ञात होती है। चरित्र सृजन और वस्तु संयोजन के अंतर्गत आई विसंगतियाँ असहज संवाद की गद्यमयता और वर्णनात्मक संवादों की दीर्घता पर यदि ध्यान दिया जाता तो यह विचारकथा अधिक सफल व प्रभावशाली बन सकती थी।)

कहा जा सकता है कि 'अमृता' उपन्यास का फलक विस्तृत, अत्यधिक विचारप्रधान और जीवन–दृष्टिकोण के प्रति दार्शनिकता से आत्मसात है। यह शिक्षित बुद्धिजीवी मध्यमवर्ग की जीवनगाथा प्रस्तुत करती है।

नाईटमेर – सरोज पाठक गुजरात की जानी–मानी आधुनिक कथा लेखिकाओं में से एक हैं। इनका रचनाकार मन प्रायः मनोवैज्ञानिक संकुलता लिए हुए होता है। रचित उपन्यास 'नाइटमेर' (1969) कुछ इसी तरह का उपन्यास है। इनके अन्य दो उपन्यास और भी हैं। इसके अतिरिक्त नाटक 'प्लेटफॉर्म' और पाँच कहानी संग्रह हैं।

उपन्यास 'नाइटमेर' नायिकाप्रधान एक मनोवैज्ञानिक कथा है। नायिका 'नियति' का विवाह प्रेमी 'सार्थ' की बजाय उसी के बड़े भाई 'अनन्य' से हो जाता है, कारण है बड़े–बुजुर्गों के निर्णयानुसार मौके पर की गई दूल्हा राजा की अदला–बदली। बडों का सम्मान करते हुए नियति इस फैसले को शिष्टाचारवश स्वीकार कर लेती है। अब रहना है तो इसी प्रणय त्रिकोण रूपी मनःस्थिति के शिकंजे में कठपुतली की दशा स्वीकारते हुए।

कथा की बुनावट सहज रोचक और व्यवस्थित आगे बढ़ती है। भाग्यवश घर के बुजुर्गों में ससुर के स्वर्गवासी होने के बाद बुआ भी अपने ससुराल गाँव चली जाती है। जीने की सहज–दिनचर्या प्रणय स्थिति के झकझोलों के बीच अन्तर्द्वन्द्व में फँसी नियति नौकरी का मार्ग इख्तियार करती है।

सावधानीपूर्वक नियति अनुशासनप्रियता, पतिव्रता, बुद्धिमता के साथ–साथ वाक्चातुर्य पर भी ध्यान देती है। पर कई बार देवर सार्थ की बेरुखी, टेबल की थाली को हाथ न लगाना, चुपचाप उठकर चल देना जैसी छोटी–मोटी बातों का दंश और अपमान झेलती नियति मन ही

मन आत्मसंघर्ष करती है। कई बार रोष, आक्रोश में ऊँची आवाज से बड़बड़ाती भी है। खासकर सार्थ को सुनाने के लिए, तब वाक्य प्रयोग की संवेदनशीलता नियति के स्वाभिमान के साथ झलक पड़ती है–

''हुं मारा घरमां गमे ते रीते, मारा पति पासे स्वतंत्र रीते, ऊँचा सादे, नीचा सादे, फावे ते रीते केम न बोलुं? आ मारुं घर छे ने तमारा पर मारो बधो अधिकार छे। बीजानी वात हुं न जाणुं।''[81]

(मैं अपने घर में जैसे चाहूं, मेरे पति के साथ स्वतंत्र रूप से, ऊँची आवाज से या नीची आवाज से, जैसा अच्छा लगे, क्यों न बोलूँ? यह मेरा घर है और तुम पर मेरा पूरा अधिकार है, दूसरों की बात मैं नहीं जानती।)

इस प्रकार नियति सामाजिक प्रपंचलीला का भोग बनकर भी अपने कर्तव्य, अपनी संस्कृति और संस्कारों को सहेजते हुए संपूर्ण जीवन अनन्य के साथ बिताती है। कई बार अपने व्यवहार में वह ऑफिस के मित्रों के बीच दोहरी जिंदगी का दिखावा अलग ढंग से भी करती है। कथा में नाटकीय मोड़ तब आता है, जब घर पर आई मित्र मंडली सार्थ को ही नियति का पति मानलेती है। इधर अनन्य भी सार्थ के लिए अपने मित्र की बहन सोना के साथ विवाह की बात चलाता है, मगर स्वयं सोना के प्रेम शिकंजे में फँसता चला जाता है। वस्तुतः कथा का प्रणय त्रिकोण नायिका नियति के साथ ही नहीं बल्कि नायक अनन्य के साथ भी चलता है। आखिरकार बच्चे का आगमन दोनों पति–पत्नी को मिलाकर सुखद अनुभूति कराता है। जबकि मनोरुग्णता की स्थिति नियति के बजाय अनन्य ही ज्यादा झेलता है फिर भी कथा का अंत आत्मीयता भेद दाम्पत्य में होता है।

संपूर्ण कथा नाटकीय शैली में रचित है। 'नाईटमेर बीजी बाजु' लेख में जशवंत शेखड़ीवाला अपना मंतव्य प्रस्तुत करते हुए कहते हैंः ''जिंदगीनी करुणतानुं निरूपण करती कृति निरुपित पात्रो माटे भावकमां जो समभाव न जगावी शके, तेमनी करुणता भावकनी आंखने जो भीनी न करी शके, तो निष्फळ ज गणाय... सूक्ष्म घटनाओमांथी समर वस्तु, मानसशास्त्रीय पात्रालेखन, नाट्यात्मक निरुपण, मार्मिक अलंकार, कल्पन–प्रतीकायुक्त शैली, कशुं नियतिना जीवननी करुणतानी भावकने अंतरमां हचमचावी मूके अेवी उत्कट अनुभूति करावी शकतुं नथी... अनन्य नियदि आदि मुख्य पात्रोनुं निरूपण जेटलुं बौद्धिक छे, तेटलुं संवेदनात्मक नथी।''[82]

(.... जिंदगी की करुणता का निरूपण करने वाली यह कृति निरूपित पात्रों के प्रति पाठकों में समभाव नहीं जगा पाई। उनकी करुणता पाठकों की आँखें गीली न कर सके तो असफल ही कही जाएगी.. सूक्ष्म घटनाओं से पूर्ण मनोशास्त्रीय पात्रों की प्रस्तुति, नाट्यात्मक प्रस्तुति, मार्मिक आलंकारिक, काल्पनिक प्रतीक शैली में होने के बावजूद नियति की करुणा पाठकों के हृदय को आंदोलित नहीं कर पाई। अनन्य, नियति आदि पात्रों की प्रस्तुति जितनी बौद्धिक है, उतनी संवेदनात्मक नहीं।)

भारतीय संस्कृति से परिपूर्ण नायिका प्रधान उपन्यास में 'नियति' की करुणा को व्यक्त करना ही लेखिका का मूल उद्देश्य रहा है और इसे प्रस्तुत करने के लिए लेखिका ने प्रणय के दौरान अपनी एकांत, घुटन, उलझन, अपराधबोध, संत्रास आदि मनोमंथनगत स्थितियों को अनेक प्रकार से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रेम, विवाह और विवाहेत्तर संबंध कहानी की मुख्य कड़ियों के रूप में पेश किये गये हैं। कथा शैली वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक, अलंकारपरक और नाटकीय शैली से युक्त है।

समाज में प्रचलित 'शोकसभा' के इस दृश्य में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ हैः

''केटलाक तो थोड़ीवार तो केटलाक वधु वार बेसे, उठे, आ तरफथी कोई अेक पर पुस्तक माँगवानो संकेत करे, कोई अेटली ज वात सांबळवा माटे अेक डोक ऊँची करे, समझे ने पछी ते पुस्तक खसेडवानो अवाज आवे। फरी यथावत निर्मम शान्ति। उठती वखते कोईनी विदाय लेवानी नहि, कोईने कशुं पूछवानुं नहि, कशुं लेवानुं नहि, कशुं आपवानुं नहि।''[83]

(कुछ लोग थोड़ी देर तो कुछ लोग ज्यादा देर तक बैठते-उठते, इस तरफ से कोई एक पुस्तक माँगने का संकेत करता, कोई बात सुनने के लिए अपनी गर्दन ऊँची करता, समझता, फिर पुस्तक रखने आवाज आती,फिर उसी तरह निर्मम शान्ति। उठते समय किसी से विदा नहीं लेना, किसी से नहीं पूछना, कुछ लेना नहीं, कुछ देना नहीं।)

वाक्य के आलंकारिक प्रयोग कई जगह मिलते हैं, जैसे- ''तपस्या पछी ज मनने स्वस्थता मळती।''[84]

(तपस्या के बाद ही मन को स्वस्थता मिलती।)

हिन्दी-उर्दू गज़ल शैली का शेर भी लेखिका ने समयानुरूप किया है-

''क्यूं इतने करीब से आवाज दी मुझे

घबरा के अपने आपसे मैं दूर हो गया।''[85]

शब्द–प्रयोग की दृष्टि से उपन्यास की सफलता स्तरीय है। लेखिका ने ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग कई जगह विशेष रूप से किया है। जैसे – भों, पीं, ट्री, टन–टन, भू–भू–भक...भक, चीं, टीक–टीक...टीक, खट्टर खट्... टप टप टप आदि।

तत्सम शब्द : स्वच्छ, सौजन्य, वैचित्र्य, स्फूर्ति, अभिमान, मुखमुद्रा, नवोढ़ा, स्मितपूर्ण आदि।

तद्भव शब्दः सांपण, रमूज, बारणां, चोक्कस, आवजो आदि।

देशज : दादर, ओरडा, सुलेह, देसदार, पाथरेला, पांपण, खाटला, नठोर आदि।

उर्दू–फारसी : महेमान, तस्वीर, आदाब, तर्ज आदि।

अंग्रेजी शब्द : शीर्षक–नाइटमेर, हॉस्पिटल, कान्ट, इमेजिन, लव–लेटर, ट्रे, फाइल, शेड, लेम्प, माय गुडनेस, फ्रीडम, रोंग साइड, डोन्ट माइंड आदि।

इस प्रकार 'नाइटमेर' उपन्यास आज के मध्यमवर्गीय परिवार की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को रेखांकित करती करुणाप्रधान कथा है जिसे लेखिका ने नाटकीयता के साथ प्रस्तुत किया है। प्रेम और मनोरुग्णता के बीच पात्रों की अंतर्व्यथा को नाट्यात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है।

कामिनीः

साठोत्तरी दौर के प्रसिद्ध उपन्यासकार मधुराय लिखित 'कामिनी' (1970) काफी चर्चा में रही। नायिका प्रधान होते हुए भी यह उपन्यास मानव चित्त के विश्लेषण की गाथा है और मनोवैज्ञानिक होते हुए भी यह उपन्यास अपने अंत में रहस्यमय और जासूसी हो रहा है।

नायक पात्र 'शेखर खोसला का मर्डर' इस उपन्यास की संरचनात्मक मूल घटना है। सामान्यतः कथा ये है कि जगन्नाथ पाठक की नाटक मण्डली में 'कामिनी' हिरोइन के रूप में शामिल हुई है, पाठक के साथ उसका विवाह होने वाला है। कामिनी का भाई सुन्दर भी इसी मण्डली में शामिल है, जो नयना नामक लड़की से प्रेम करता है। वह नयना नाट्यमंडली में नहीं है, लेकिन कामिनी की खास सहेली है। नाट्यमण्डली के अन्य पात्रों में एक युगल दम्पति प्रीतम और स्वाति है जो निःसंतान होने के कारण दुखी है। सुन्दर का स्वाति के साथ भी अवैध संबंध है।

सुन्दर का मित्र और नाट्यमण्डली का लेखक पात्र केशव ठाकर हैं जो कथा में केन्द्रीय पुरुष पात्र की भूमिका बनाता है। यह 'रातरानी' नामक नाटक लिखता है जो किसी को पसन्द नहीं आता। अतः फार्स नाट्य कम्पनी द्वारा लिखा 'कोई पण अेक फूलनुं नाम बोलो तो?' (किसी एक फूल का नाम बोलो तो?) नामक नाटक खेला जाता है। केशव ठाकर एक पीड़ित पात्र है, क्योंकि इसकी पत्नी सुधा का संबंध शेखर खोसला नामक व्यक्ति से रहता है। यह शेखर खोसला कभी कामिनी का प्रेमी रहा होता है। अतः नाटक खेलते समय नाटक के अंत में हिरोइन कामिनी को देशपाण्डे नाम के पात्र का (केशव ठाकर का) नकली खून करना होता है, परन्तु कामिनी प्रेक्षकागार में बैठे 'शेखर खोसला' का खून कर देती है, फलस्वरूप उसे उम्रकैद की सजा हो जाती है। संपूर्ण कथा इस प्रकार रहस्यमयी और जासूसी मोड़ पर आ जाती है। कोर्ट–कचहरी की सुनवाई पात्रों के मन में बैठे रोगों की मुक्ति आदि कथा को निष्कर्ष की ओर पहुँचाते हैं। डॉ. सुमन शाह इस विषय में कहती हैं–

''जात विशेना अेना गर्व अने अहंकारनी विकृति अेनामां रहेला क्लीयोपेट्राना प्रकारनी दमन अने पुरुषपीड़ननी वृत्ति जन्मावे छे। तेनामां अेनुं नारी रहस्य अने सौन्दर्य धोवाई जाय छे। कामिनी पोते ज तूटी जाय छे। अेमां अेनी करुणताने माटे मानवीय गौरवनो मुगुट फूटे छे। अने तेथी ज अे जनमकेद तेना माटे मोक्ष छे।''[86]

(स्वयं के प्रति गर्व और अहंकार की प्रवृत्ति के कारण उसके अंदर रही क्लीयोपेट्रा की तरह के दमन और पुरुष पीड़न की वृत्ति का जन्म होता है। उसमें इसका नारी रहस्य और सौंदर्य समाप्त हो जाता है। कामिनी स्वयं टूट जाती है। इसमें उसकी करुणा पर मानवता का ताज स्फूट होता है। इसी वजह से यह उम्रकैद उसके लिए मोक्ष है।)

कामिनी की पात्र–योजना थोड़ी उलझी हुई अवश्य लगती है, क्योंकि नायक पात्र जिसकी हत्या होती है वह शेखर खोसला कथा में आधिकारिक रूप से कहीं भी नहीं आता, बस बातचीत में कामिनी अपने इस प्रेमी पुरुष की बातें अपने साथियों के मध्य करती है। राधेश्याम शर्मा इसे 'मीथ' पात्र मानते हैं, जबकि शेखर खोसला की हत्या नाट्य के माध्यम से पूर्वनिर्धारित होती है। स्वयं केशव ठाकर अपनी पत्नी का इस व्यक्ति के पीछे पागल होना का स्वीकार करता है। डॉ. सुमन शाह पात्रों के संदर्भ में कहती हैं:

''अहीं दरेक चरित्र व्यक्ति छे ते छतां गृपनी पण एक इमेज उपसे छे। ते कई रीते छिन्न थाय छे ते जाणवुं रसप्रद थई पड़े छे। केशव कामिनीनी कथा शेखर प्रीतम पाठक सुंदर अने स्वातिनी अेटले के पुरुष–स्त्रीनी बनीने माणसोना जीवननी अेटले के मानवीनी बनी रहे अेवी कलात्मकतानुं रचनामां गर्भितभावे आकलन थतुं आवे छे।''[87]

(यहाँ प्रत्येक चरित्र व्यक्ति है, इसके बावजूद गृह की भी एक इमेज उठी है, वह किस प्रकार अलग होती है, यह जानना रसप्रद हो सकता है। केशव, कामिनी की कथा, शेखर, प्रीतम पाठक, सुन्दर और स्वाति यानी पुरुष–स्त्री दोनों रूप में मानव जीवन अर्थात् मानवीय जीवन की बनी रहती है ऐसी कलात्मकता का रचना में गर्भित रूप से से आकलन होता है।)

स्त्री–पुरुष सहज संबंध, दाम्पत्य जीवन की विषमताएँ, प्रेम के अभावों में उलझे चरित्र, मनोविच्छेद, अलगाव, टूटे मानवों की कहानी जैसे आधुनिक पीढ़ी को सहज और सरलता से प्रस्तुत कर देती है। नाट्यमंडली का संस्थापक पाठक इसलिए मानव को 'पोतानां मूळ चावी गयेलो माणस' (अपनी जड़ों को चबा जाने वाला मनुष्य) कहता है। केशव ठाकर के व्यक्तित्व के लिए पाठक यह मानता है:

''कोई बनावथी टूटी गयो छे अेटले हास्यास्पद लागे छे... गजबनो माणस छे, पण अेनामां पेली महोताजी छे, अे लाचारी अेनी पासे खरेखर कंईक लखावशे।''[88]

(किसी घटना से टूट गया है इसीलिए हास्यास्पद लगता है... ग़ज़ब का मनुष्य है, पर उसमें मोहताजी (लाचारी) है, वही लाचारी इससे वास्तव में कुछ लिखवाएगी।)

इस प्रकार संपूर्ण उपन्यास में मुख्य पात्र केशव ठाकर और कामिनी आदि अपने जीवन के घटनाक्रमों के तहस, विवश, टूटे–फूटे, खण्डित व्यक्तित्व लिए हताश, निराश जैसी कुंठाएँ जीते हैं, मगर शेखर खोसला की मौत उन्हें इन रोगों से मुक्त कर देती है। कामिनी उपन्यास उपन्यास परम्परा के स्वरूप से हटकर लिखा गया है। इसकी कहानी पात्रों के अलग–अलग जीवन से जुड़ी होकर भी परस्पर सभी पात्रों के बीच संबद्ध गुँथी हुई होकर एक घटना में अंतिम परिणति तक पहुँचती है। नाटक के सूत्रधार अलग, नायक खिलाड़ी अलग और नाटक का अंत दर्शक शेखर खोसला की हत्या के साथ होता है।

'कामिनी' स्वयं की कथा में 'पाठक' के साथ विवाह की स्थितियाँ बनती हैं पर वह गुड़िया

जैसे भारतीय पत्नी होकर रहना नहीं चाहती। इधर कामिनी का भाई सुन्दर उसे इसलिए ब्लैकमेल करता है क्योंकि वह कमाऊ बहन है। इसलिए वह उसके पुराने प्रेमी के प्रेमपत्रों के आधार पर उसे ठगता है। डायरी शैली में पाठक की डायरी के आधार पर और भाई सुन्दर के संवादों के आधार पर कामिनी का चरित्र सामने आता है।

प्रीतम, सुन्दर, स्वाति सभी पात्र अपराध बोध से ग्रस्त हैं। मातृत्व से वंचित स्वाति सुन्दर को चाहने लगी है। अतः ये पात्र भी मानव मन की अन्तःसंघर्षमयता को ही प्रस्तुत करते हैं।

शेखर खोसला जो कि उपन्यास का काल्पनिक पात्र बताया जाता है, वह वास्तव में नाटक के अंत में स्पष्ट होता है कि वह सच्चा पात्र ही था और केशव ठाकुर उसी के कारण मनोरुग्ण हो गया था, क्योंकि एक तो उसके बहुत से अहसान उस पर थे, दूसरा उसकी पत्नी का उसके साथ अवैध संबंध था। कामिनी के भीतर भी शेखर खोसला को लेकर परपीड़न प्रकृति थी। अतः उसकी हत्या से दोनों पात्र (केशव ठाकर और कामिनी) मुक्ति की साँस लेते हैं, मनोरुग्णता से बरी हो जाते हैं।

वर्णन शैली के साथ-साथ नाटकीय रूप होने से उपन्यास में 'संवाद शैली' का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। क्योंकि उपन्यास में नाटक नट-नटी द्वारा मंचित होता है। अतः मूल कथा थोड़ी उलझकर संकुल बन जाती है, वास्तविक कथा एक नाटक और मंचित नाटक स्वयं में एक वास्तविक कथा का रूप ले लेता है। अदालत की सुनवाई के दौरान फ्लैशबेक पद्धति का प्रयोग विशेष रूप से हुआ है-

''सत्य सिवाय कंई नहीं चाले, आरोपी कामिनी देसाईने तमे ओळखो छो, जवाब दो, हा के ना? जेनां स्वरूपो पर तमे रात्रिना हूंफाळा प्रहरो विताव्या छे, अेने नथी ओळखता?''[89]

(सत्य के अतिरिक्त कुछ नहीं चलेगा, आरोपी कामिनी देसाई को तुम पहचानते हो, जवाह दो, हाँ या ना? जिसके अंगों पर तुमने शीतल रात्रि के भावनामयी प्रहर बिताए हैं, उसे नहीं जानते?)

इसी प्रकार पाठक की डायरी-शैली में कथा का बहुत-सा भाग स्पष्ट हो जाता है। पात्रों के चरित्र को स्पष्ट करने में भी डायरी शैली प्रभावपूर्ण कार्य करती है -

''कामिनीना जातीय आवेगो रिफ्लेक्स जेवा थई गया छे। खरेखर साची रीते अने प्राकृतिक

जातीय आवेगो रह्या नथी, अेनी आवश्यकता अेने संभाळी लेवानी आवश्यकता, अेना मारा नाटकना हितमां छे।''[90]

(कामिनी के जातीय आवेग रिफ्लैक्स जैसे हो गए हैं। वास्तव में अब वास्तविक आवेग रहे ही नहीं, उसकी आवश्यकता, मानसिक बन गई है। कामिनी विकृत हो गई है, उसे संभाल लेने की जरुरत, उसके लिए, मेरे लिए और नाटक के हित में है।)

उपन्यास में लेखिका ने कई बार पुनरावर्तन वाक्य शैली का प्रयोग भी किया है। ऐसे प्रयोग से बात की अहमियतता बढ़ती है। जैसे कामिनी शेखर खोसला की मृत्यु होने पर विक्षिप्तता से कहती है–

''शेखर खोसला... शेखर खोसला... सोगंद लो.. सोगंद लो.. हा.. मारी साथे वात करो... मारी साथे.. वात करो.. मारी साथे वात करो... मारी साथे वात करो... वात करो।''[91]

(शेखर खोसला.. शेखर खोसला... सोगंध लो.. सौगंध लो... हाँ.. मेरे साथ बात करो.. मेरे साथ.. बात करो। ... बात करो.. मेरे साथ बात करो.. बात करो.. बात करो।)

इस प्रकार सम्पूर्ण उपन्यास कुतूहलप्रधान है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से तत्सम शब्द : सर्पदंश, आखेट, प्रणाम, नतमस्तक आदि हैं। तद्भव शब्दों में गरगड़ी, तरस और देशज शब्दों में हरखपदूडा, डघाईष तांबदी, खोबो, गडदापाटु जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है। अंग्रेजी शब्द भी बहुतायत से प्रयुक्त हुए हैं जैसे ब्लैकमेल, बेट्टीज़ एण्ड जेन्टलमेन, इमोशन, प्रोसेस, कॉलमिस्टो, ग्रुप, ट्रेज़रर, चार्ज, वाइरस, ड्रामा आदि।

यह उपन्यास मानव के जीवन का एक वैचारिक पहलू प्रस्तुत करता है। मनुष्य जीवन की व्याख्या प्रत्येक रचनाकार अपनी दृष्टि से करता है। मधु राय कामिनी के विचारकणों के द्वारा यही कहती हैः

''कदाच माणस अेक विचार ज छे, कदाच माणस लागणीओनुं पड़ीकुं ज छे, कदाच माणस फूलो जेटलुं असहाय अने पोताना जीवन, विचारो, व्यक्तित्व ऊपर बिलकुल काबू विनानुं प्राणी ज छे, कदाच माणसो परस्परनां प्रारब्ध लड़ावता जंतुओ छे।''[92]

(संभवतः मनुष्य एक विचार ही है, संभवतः मनुष्य संवेदनाओं की पुड़िया ही है, संभवतः मनुष्य फूलों जितना असहाय और स्वयं के जीवन, विचारों और व्यक्तित्व पर एक बेकाबू प्राणी

ही है, संभवतः मनुष्य परस्पर के उद्देश्य को भिड़ाते जंतु हैं।)

इस प्रकार यह उपन्यास मानव जीवन की ही व्याख्या प्रस्तुत करता है। कौतुहलता, रहस्यमयता या जासूसीपन इसकी प्रमुख शैली बनकर इसे अन्य उपन्यासों से अलग व विशिष्ट बना देते हैं।

प्रियजन : प्रियजन सन् 1980 में रची श्रेष्ठ नवलकथा स्वरूप गुजरात सरकार की ओर से मिली प्रथम पारितोषिक उपन्यास है। वीनेश अंताणी रचित इस उपन्यास का मुख्य स्वरूप सामाजिक है। विधवा नायिका चारू के इर्दगिर्द उसके प्रियजन परिवार–प्रेमी–पति की स्मृतियाँ उपन्यास का फलक तैयार करती हैं।

सामाजिक परिवेश में मध्यमवर्गीय विधवा चारु का मनोविज्ञान जहाँ यह उपन्यास व्यक्त करता है वहीं अकेलेपन के बावजूद अपने प्रियजन की उपस्थितियाँ उसे उष्मा से भर देती हैं। जहाँ वह प्रेमी निकेत से अपनी मनोग्रंथियों को खोलती है, वहीं भारतीय नारी के संस्कारों को भी संचित किए अपने पति दिवाकर का स्मरण करती है। अपने पूर्व प्रेमी निकेत के साथ विवाहेत्तर संबंध की मर्यादा का भी वह ध्यान रखती है। अपने वैधव्य के अकेलेपन को स्वीकारते हुए वह निकेत से कहती हैः

''मने कशुं ज गमतुं नथी हवे.. अेकली रहूं छुं बे वरसथी, अेटले मारा संदर्भोथी पण जाणे मुक्त थवानी कोशिश करुं छुं.'' (विनेश अंताणी, प्रियजन, पृ. 35)[93]

(मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता... दो साल से अकेली रहती हूँ, इसलिए मेरे संदर्भो से भी मुक्त होने की कोशिश करती हूँ।)

पूर्व प्रेमी निकेत सेवानिवृत्त होकर अपने परिवार सहित अपने गाँव लौटा है, लाइब्रेरी के बाहर एक दिन अचानक चारू का फिर से मिल जाना, उनकी बातचीत, चार दिन तक चारु के घर बिताना, चारु के वैधव्यपूर्ण जीवन में क्षणिक आत्मीयता–भरे क्षण भरना, पुरानी बातों का स्मरण, उम्र के ढलान पर बढ़ता खालीपन जैसे दोनों परस्पर बाँटते हैं। अतः उपन्यास में स्मरण शैली का प्रयोग सर्वाधिक है। जैसे चारु निकेत को वह किस्सा सुनाती है, जब बेटे शैल के लिए उसकी मनपसंद लड़की अमृता से दिवाकर और वह किस प्रकार मिले थे, कैसे खेल के मैदान

पर पहली बार देखने, फिर पिक्चर ले जाने और बेटे को उसके साथ अकेला छोड़ आने के बाद दिवाकर के बीच का वह दिन? चारु कहती है:

''पाछा वळतां चारु शांत हती, दिवाकर मोजमां हतो, अेक सिगारेट लटकती हती अेना होठ वच्चे, सुकेतु अने राशि पिक्चरनुं नक्की करता हता, चारु रस्ताने जोया करती, सीधा रस्ताओ, माणसोनी वणजार अने स्थिर उभेलां वृक्षो अने मकानो... दिल्लीनी रविवारनी सांज उपर आछुं धुम्मस उतरी आव्युं हतुं. अेनो संसार गीतो गातो, सिगारेट पीतो, अंग्रेजीमां बोलतो, जीन्समां अने काफेमां जिवातो हतो, दिवाकरनो मोजीलो स्वभाव जाणे अे बधांनो किनारो हतो अने वच्चे खुशी छलछलाया करती हती।'' (विनेश अंताणी, प्रियजन, पृ. 141)

(वापस लौटते हुए चारु शान्त थी, दिवाकर मस्ती में था, उसके होठों के बीच एक सिगरेट लटकती थी, सुकेतु और राशि पिक्चर का तय कर रहे थे, चारु रास्ते को देख रही थी, सीधे रास्ते, मनुष्य की आवाजाही और स्थिर खड़े वृक्ष और मकान... दिल्ली के रविवार की यह शाम जैसे कोहरे से भरी थी... उसका संसार गीत गाता, सिगरेट पीता, अंग्रेजी में बोलता, जीन्स और कॉफी के बीच जीता था, दिवाकर का मस्तीभरा स्वभाव जैसे सभी के लिए किनारा था और बीच में खुशी छलछलाया करती थी।)

चारु अपने परिजनों–प्रियजनों के सामीप्य को अकेले याद करती है। दोनों बेटे अपनी–अपनी नौकरी में अपने परिवार के साथ दूर रहते हैं, चारू नौकर के साथ बड़े वैभवशाली बंगले में अकेले जीवन बिताते हुए भी प्रियजन के साथ है, जो कि उपन्यास के शीर्षक को भी सार्थक करता है।

लेखिका ने कथा को कहने के लिए वैचारिकता और बोधगम्य शैली का प्रयोग चारु के संवादों में अभिव्यक्त किया है।जैसे–

''अमुक समय पछी दूर रहेवाथी कदाच समज अने प्रेम सचवाय छे। गेरसमजने ओछो अवकाश रहे, अेटले संबंध टके छे।''[95] (प्रियजन, पृ. 85)

(कुछ समय तक दूर रहने से संभवतः समझ और प्रेम सुरक्षित रहता है। नासमझी के लिए कम अवकाश रहता है। इसलिए संबंध मजबूत होता है।)

उपन्यास संवेदनात्मक स्वरूप लिए हुए है। स्त्री–पुरुष प्रेम के बीच उपस्थित मानव मन

की सूक्ष्म रागात्मक गहराइयों को भी लेखक ने छुआ है। जैसे इस भावपरक शैली में–

''कशुं ज बोल्या विना बंने जोतां रह्यां, दरियानो घुघवाट अेमने घेरी वळ्यो हतो... चारु आटली नजीक क्यारे न हती उभी, दरियामांथी उठता नाद ने लीधे स्थळ अने विस्तारनो भौगोलिक ख्याल जाणे ओगळी गयो हतो, बधुं ज अेक बिंदु पर आवीने गोठवाई गयुं हतुं, कशुं ज दूर नहोतुं, बधुं एक हतुं।''[96] (प्रियजन, पृ. 39)

(बिना कुछ बोले दोनों देखते रहे, समुद्र के शोरगुलने उन्हें घेर लिया था... चारु इतनी नजदीक कभी खड़ी नहीं हुई थी, समुद्र से उठती आवाज के कारण स्थान और विस्तार का भौगोलिक खयाल भी जाने भूल गए थे, सब कुछ एक बिंदु पर आकर ठहर गया था, कुछ भी दूर नहीं था, सब एक था।)

चारु और निकेत की सहज बातचीत और सहज दिनचर्या के बीच संवाद शैली का प्रयोग हुआ है।

'भूख लागी छे ने, निकेत?'

'हा, खूब भूख लागी छे।'

'झड़पथी रसोई बनी जशे... तुं थोडी वार आराम कर...।'

'चाल, हुं पण रसोडामां आवुं छुं, तने रसोडामां मदद करीश। उमाअे मने रसोई बनावता पण शीखव्युं छे, साथे मळीने काम करवानो आनंद होय छे...''[97] (प्रियजन, पृ. 39–40)

('भूख लगी है न, निकेत?', 'हाँ, बहुत भूख लगी है।'

'अभी तुरंत रसोई बन जाएगी, तू थोड़ी देर आराम कर...'

'चल, मैं भी रसोई में आता हूँ, तुझे रसोई में मदद करुँगा, उमा ने मुझे रसोई बनाना भी सिखाया है, साथ मिलकर काम करने में आनन्द होता है..।')

उपन्यास की संपूर्ण कथा मुख्य पात्र चारु और निकेत के बीच चार दिन के साथ रहने में पूर्ण हो जाती है। इन्हीं के बीच दोनों के परिवारों और परिस्थितियों का परिचय मिलता चलता है। गौण पात्रों की भूमिका जैसे दिवाकर, उमा, सुकेतु, राशि, शैल, अमृता आदि सीधे–सीधे प्रस्तुत नहीं होते, अतः समग्र कथा में ये पात्र या तो स्मरण शैली द्वारा या फिर संवाद शैली के साथ–साथ वर्णनपरक रूप से प्रस्तुत हुए हैं। इस उपन्यास को लिखने से पूर्व एक प्रश्न स्वयं

लेखक वीनेश अंताणी को मथता रहा जिसे उन्होंने उपन्यास की भूमिका में लिखा है–

''जीवन ने भरपूर जीवी लीधुं होय, बधुं ज सभर होय छतां पाछली जिंदगीनी अेक नमती सांजे अेकाद चहेरो मनमां छलकाई जाय, अेवुं बने त्यारे प्रश्न थाय कई क्षण साची? के पछी बंने ज साची?''[98] (आ प्रियजनपणुं... भूमिका से)

(जीवन को भरपूर जी लिया हो, सब कुछ व्यवस्थित होने के बावजूद पिछली जिंदगी की एक ढलती सांझ को, एक चेहरा मन में छलक उठे, ऐसा घटता है तब प्रश्न उठता है कि कौन–सा क्षण सच है? वह या यह? या फिर दोनों ही सच?)

लेखक ने उपन्यास सरल और रोचक शैली में लिखा, फ्लैशबेक पद्धति का प्रयोग आरंभ से ही है, चारु अपने अतीत में निकेत को ले जाती है और फिर पुनः वर्तमान में लौटते हुए अपनी–अपनी जिंदगी में ढल गए ये दोनों प्रेमी पात्र कथा को बाँधे रखते हैं। पात्रों का चयन, संवाद भावानुकूल है, परिवेशगत उम्र के सोपान चढ़ते दोनों ही पात्र वैचारिक साम्य के साथ अंतरंग दूरी भी बनाए रखते हैं। दोनों को दोनों के परिवार और बच्चों के बारे में जानने की उत्सुकता बनी रहती है। शब्द चयन में सहजता और सतर्कता बरती है–

संस्कृत शब्द – संदर्भ, विषाद, निर्मल, स्थल, चिंतित, प्रतिकृत, अगोचर, समृद्धि आदि।

तद्‌भव शब्द – प्रेम, बधुं, लागणी, रसोडा, अेकली, सांझे, वहाल, वेरान रण, सचवाय, कमरा, पोत–पोताना

देशज शब्द – घुघवाट, ओगळी, गोठवाई, छोकरी, अकळाई, आँटा, अजंप आदि।

उर्दू–फारसी– दरिया, नजीक, ख्याल, कबूल, कोशिश, मदद, जिंदगी, गेरसमज, गेरहाजरी, फरजियात आदि।

अंग्रेजी शब्द – हेट, डॉक्टर्स, कलेक्टर, पब्लिक रिलेशन, न्यु, स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, लेक्चरर इत्यादि।

प्रियजन उपन्यास की संपूर्ण कथा भारतीय मध्यवर्गीय परिवेश और सांस्कृतिक मूल्यों को लेकर चली है। मानवीय संबंधों की प्रेममयी उदात्तता को सुरक्षित रखते हुए यह कथा प्रौढ़ उम्र की वैचारिकता को प्रस्तुत करती है। उम्र की ढलान को वैचारिक पकड़ व आत्मीयसूत्रों में बाँधने में सफल होने के कारण यह एक रोचक उपन्यास है।

बत्रीस पूतळीनी वेदनाः

लेखिका इला आरब महेता ने यह उपन्यास 1982 में लिखा था जो अपनी लोकप्रियता के कारण अब तक चार संस्करणों में प्रकाशित हो चुका है। समाज में नारी जीवन की समस्याओं पर केन्द्रित होने के कारण यह उपन्यास नारी विमर्श के लिए केन्द्रीय रूप से उल्लेखित हुआ है। शीर्षक का आधार पौराणिक शैली में 'सिंहासन बत्तीसी' की लोकवार्ता से लिया गया है। पुरुषप्रधान समाज में सिंहासन की उन बत्तीस पुतलियों की वेदनाएँ क्या हो सकती हैं, इसी की यथार्थपरक कल्पना को यह उपन्यास आधुनिक समाज के रूप में प्रस्तुत करता है। नारी चेतना जाग्रत करना इसका मुख्य लक्ष्य है।

सामाजिक बुराइयों के रूप में दहेज, तलाक, वैधव्य, अनैतिक प्रेम संबंध की समस्या, महँगाई, गरीबी, जाति–विद्वेष इत्यादि अनेक कोणों को यह उपन्यास छूता है। स्त्री–मुक्ति का प्रश्न सर्वाधिक रूप से उभरा है। इसी के तहत लेखिका ने मध्यमवर्गीय समाज का यथार्थ ढाँचा खड़ा कर दिया है।

कथा के संयोजन में यह पात्र 'शास्त्रीजी' जो कि 'आर्यनारी हितवर्धक मंडल' के प्रमुख स्वरूप नारियों को प्रवचन देते हैं, का पात्र चरित्र प्रमुख इसलिए हो उठता है क्योंकि ये नारी के परम्परित ढाँचे को भारतीय संस्कृति के अनुरूप निभाए रखने में ही विश्वास रखते हैं।

कथा की नायिका पात्रा 'अनुराध' एक संवेदनशील लेखिका है, शास्त्रीजी इसे हितवर्धक मंडल की सौंवी वर्षगांठ का उत्सव मनाने हेतु संस्कारी नारी विषय पर एक नाटक लिखने का प्रस्ताव करते हैं। नाटक लिखना और स्वयं नारी–स्वरूप जीवन की विषमताएँ भोगना अनुराधा के नाटक की कथावस्तु बनते हैं जिसे अनुराधा रामायण के नारी पात्रों (कैकयी, कौशल्या, सीता और मंथरा) के आधार पर आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करती है। नारी की वेदना ही उपन्यास का धरातल–कथ्य है। स्वयं अनुराधा भी जैसे आधुनिक हर नारी की तरह उस वेदना को जीती है, सोचती है–

''पुरुषोओ उभी करेली, पुरुषो द्वारा चलावाती सृष्टिमां अेने टकी रहेवानुं हतुं, स्त्री तरीके, लेखिका तरीके।''[99] (पृ. 15)

(पुरुष द्वारा खड़ी की गई, पुरुषों द्वारा चालित इस सृष्टि में उसे खड़े रहना था, स्त्री के

रूप में, लेखिका के रूप में।)

पात्र लेखिका अनुराधा में वैचारिक गहराई का दिग्दर्शन स्थान–स्थान पर मिलता है जब उसके बेटे का बाल मन उससे पूछता है कि क्या इस दरिया के गहराई में डूबकर मर नहीं जाते? तो वह कहती है– ''जो चालता आवडे तो डूबी न मराय, अेटले माणसे वहाण शोधी काढ्युं छे। वहाण अेटले पग, गमे तेटलुं उंडु पाणी होय पण होडी होय तो चलाय, शुं दरियामां, शुं जीवनमां।''[100] (पृ. 7)

(यदि चलना आता हो तो डूबकर मरा नहीं जा सकता, इसलिए मनुष्य ने जहाज ढूंढ निकाला है, जहाज यानि पैर। कितना ही गहरा पानी क्यों न हो, यदि नाव है तो चला जा सकता है, क्या समुद्र में, क्या जीवन में!)

नारी जीवन की विषमताओं और वेदनाओं को लेखिका ने विभिन्न शैलियों की विवधता में प्रस्तुत किया है। नारी चेतना पर आधारित ज्वलंत प्रश्न नाट्य–प्रस्तुति के दौरान तो है ही, सारा उपन्यास ही इन्हीं बातों पर आधारित है, प्रश्न·दर प्रश्न? सनातन काल से चले आ रहे प्रश्न? पौराणिक पात्रों के दृष्टांत पर चले आ रहे प्रश्न? आखिर मानवीय रूप में नारी के लिए प्रेम की परिभाषा क्या? पुरुष के प्रति सहज प्रेम की परिभाषा क्या? बड़े ही सफल ढंग से इला महेता ने प्रश्नोत्तर शैली का यहाँ प्रयोग किया है, जिसे नायिका पात्र अनुराधा अपने नाटक लिखते समय तीन रूपों में व्यक्त करती है–

''प्रेम अेटले शुं केवळ निःशेष समर्पण? पति ने खातर जीवन होडमां मूकनारीने शुं पुत्रनुं सुख जोवा मागवानो अधिकार नहि? ने सुखनी व्याख्याओय केटकेटली हती?

प्रेम अेटले अशेष आत्मसमर्पण ज? कोई अपेक्षा नहि?

प्रेम अेटले स्वीकार, जे प्राप्त थयुं तेनो स्वीकार ने तेनी व्यथा केवळ अंतरमां अेकलां ज भोगववानी?''[101] (पृ. 34)

(प्रेम यानी क्या? केवल निःशेष आत्मसमर्पण? पति के लिए अपने जीवन को दाँव पर रखनेवाली को क्या पुत्र का सुख देखने माँगने का अधिकार नहीं? और सुख की व्याख्या कैसी–कितनी थी?

प्रेम यानी अशेष आत्मसमर्पण मात्र? कैसी भी अपेक्षा नहीं?

प्रेम यानी स्वीकृति, जो मिला उसे स्वीकार कर उसकी व्यथा को केवल हृदय में अकेले भोगना?)

नारी जीवन के ऊपर कितने की प्रश्न कटाक्ष स्वरूप में भी उभरे हैं। यहाँ इला मेहताने व्यंग्य शैली का भी प्रयोग किया है।

''वाह-वाह! स्त्री अेटले केवळ पोतानी उंमरनो, पोतानो देखावनो विचार करनार मूर्ख, मिथ्याभिमानी, निःसत्व प्राणी!... स्त्री अेटले वानगीओनी डिपार्टमेन्ट-स्टोर, अेटले के बनावनार... पछी? हा, बाल मानसशास्त्र, घर ने करकसर।''[102] (पृ.14)

(वाह-वाह! स्त्री यानी अपनी उमर का, अपने दिखावे का विचार करने वाली मूर्ख, मिथ्याभिमानी, निःसत्व प्राणी मात्र।... स्त्री यानी व्यंजनों का डिपार्टमेन्ट-स्टोर, यानी बनानेवाली... फिर? हाँ, बाल मानसशास्त्र, घर की शेषपूर्ति?)

दाम्पत्य जीवन की शुष्कता अनुराधा अपने पति के आए पत्र में अनुभव करती है जबकि यही पति रसेश कॉलेज में विवाह से पूर्व कितने ही संवेदी-पत्र लिखा करता था। यहाँ पत्र-शैली का प्रयोग सुन्दर ढंग से हुआ है-

''प्रिय अनु, हुँ अहीं मजामां छुं, चारेक दिवसमां काम पती जशे, कई फ्लाइटमां आवीश ते नक्की नथी, ऑफिसमां फोन करी पूछी लेजे, बाकी बधुं बराबर हशे तेवी आशा राखुं छुं। अपू ने वहाल - रसेश''[103] (पृ. 26)

(प्रिय अनु, मैं यहाँ मजे में हूँ, चार-अेक दिन में काम पूरा हो जाएगा। किस फ्लाइट में आऊँगा, यह अभी तय नहीं है, ऑफिस में फोन करके पूछ लेना, बाकी सब ठीक होगा ऐसा आशा रखता हूँ। अपू को प्यार- रसेश।)

नायिका लेखिका है, अतः चिंतनस्वरूप क्षणों में नारी के यथार्थ को रेखांकित करने हेतु एक विज्ञापन खाली कागज पर बनाती है। व्यंग्य शैली का प्रयोग इस विज्ञापन में नारी के अति आधुनिक, भोगपरक दृष्टि को सामने रखने में सफल रहा है-

''सिगारेट अने स्त्री : बंने सरखां छे। बंने बळी जइने पुरुषोने आनंद आपे छे।''[104] (पृ. 13)

(सिगरेट और स्त्री : दोनों एक समान हैं। दोनों जलकर पुरुषों को आनंद देते हैं।)

इसी तरह एक विज्ञापन सार्वजनिक समाचार स्वरूप 'बेटरी' का भी है जिसकी तुलना में स्त्री का देह भोग वाली स्थिति व्यक्त है-

''हलकी बेटरी आ स्त्री जेवी छे। तमने सतावती, हेरान करती, आवी बेटरी गाडीमां न वापरशो, अमारी ब्रान्ड वापरशो।''[105] (पृ. 13)

(हलकी बैटरी इस स्त्री जैसी है, तुम्हें सताने वाली, हैरान करने वाली। ऐसी बैटरी गाड़ी में प्रयोग न करें, हमारी ब्रान्ड ही प्रयोग करें।)

'सदगुणा भवन' को एक सेठ ने इस 'आर्य नारी हितवर्धक मंडल' स्वरूप भेंट किया था, इसमें शास्त्रीजी आख्यान–प्रवचन कर अनेक नारियों को आदर्श भारतीय नारी बनाने का कार्य करते हैं। 'बंधन तूट्या' नामक उपन्यास जो कि अनुराधा ने लिखा था, को इस मंडल की लगभग सभी स्त्रियों ने चोरी–छिपे पढ़ा है, क्योंकि यह शास्त्रीजी की आदर्श स्त्री छवि के खिलाफ है और नारी–चेतना जगाता है। इन्हीं स्त्रियों के लिए अनुराधा अब पौराणिक पात्रों (रामायण के) के आधार पर आधुनिक संदर्भ में नारी–वेदना का नाटक लिखती है। सारा उपन्यास इसी हकीकत को समेटता हुआ नारी का यह बिंब प्रस्तुत करता है कि–

''प्रेमनी सृष्टिनी खोज अमारे अेक मानवी बनीने करवी छे, अेक अेवो मानव जेना विकासनी बधी दिशाओ मोकळी छे। न देवी, न राक्षसी, अमने मात्र स्त्री रहेवा दो।''[106] (पृ. 176)

(प्रेम की सृष्टि की खोज हमें एक मानव रूप में करनी ही, एक ऐसा मानव जिसके विकास की सारी दिशाएँ खुली हों। न देवी, न राक्षसी, हमें केवल स्त्री रहने दो।)

रामायण के चारों नारी पात्रों को रेखा, विनोदिनी, छाया और विभावरी खेलती हैं जो एक सफल प्रस्तुति के रूप में व्यक्त हुआ है।

वस्तुतः नाटक द्वार इस उपन्यास में वैवाहिक जीवन के बाद नारी मन की कुंठित सच्चाई को सामने लाने का प्रयास किया गया है। उपन्यास की भाषा आकर्षित करती है क्योंकि रामायण पात्रों के नाटक का मंचन संस्कृत गर्वित भाषा की माँग करता है, शास्त्रीजी की संस्कृत भाषा आडम्बरपूर्ण है, और नौकर आदि की भाषा में पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग लेखिका ने ध्यान में रखकर किया है। नारी पात्रों के संवाद वेदना को व्यक्त कर पाए हैंऔर सचमुच नारी चेतना के मन्तव्य को पूरा कर पाए हैं।

शब्द प्रयोग की दृष्टि से यह एक उत्तम उपन्यास है। जैसे

संस्कृत शब्द : सृष्टि, रथ, पुलकित, क्षितिजरेखा, सदन, जगत, शील, सतीत्व, वैधव्य, तप,

समर्पण, चेतना, आत्मा, क्रूरता, सख्य, कलम, विक्षेप, भींत, वस्त्राभूषण, त्रिराशि इत्यादि।

अंग्रेजी शब्द : फर्स्ट क्लास, टाइम, सेमिनार, केरियर, कम्बाइण्ड, सिगरेट, बेटरी, ब्रान्ड, डेमॉन्स्ट्रेशन, डिपार्टमेन्ट, स्टोर, युनिफार्म, रोड, कॉलगर्ल, मोर्डन टच, राटिंग टेबल आदि।

तद्भव शब्दः वरंडा, आथमता, घूंटण, शिबिर, वानगी, चूंदडी, भणतर, लोही, रूपाळा, हींचका, झुम्मर, रण, बाबत आदि।

देशज शब्द : घरकूकडी, भगवी, ओरडा, जाड़ा, गरक, खंडेरो, करम कठणाई, बरछट, लींपण इत्यादि।

उर्दू–फारसी प्रयोग : जमीन, मोजूं, फुरसत, इमारत, उस्ताद, मुरब्बीवट, दाखल, बजार, महेमान, आबरू, महाशय, दास्तान आदि।

आगन्तुक (सन् 1996):

आधुनिक गुजराती उपन्यासों में प्रतिष्ठित लेखिका धीरुबेन पटेल को 'आगन्तुक' उपन्यास से पूर्व दर्शक फाउण्डेशन अवॉर्ड मिला है। ये भुवन्स कॉलेज, बम्बई में लम्बे समय तक प्राध्यापिका रहीं और 'सुधा', 'जन्म भूमि' जैसे पत्रों की संपादिका भी रहीं। हुताशन (उपन्यास), 'आंधळी गली', 'अधूरो कोल' और 'एक लहर' इनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

'आगन्तुक' धीरुबेन पटेल का लघु उपन्यास है। कथा नायक केन्द्रित 'ईशान' के जीवन की है। कथावस्तु के पूर्वाद्ध में ही लेखिका ने अपनी सोद्देश्यता जाहिर कर दी है–

''रोशनीथी झगमगताखंडमां जामेली महेफिलमां बहारना अंधकारमांथी उड़ीने आवेलुं पक्षी अेक बारीअेथी प्रवेशी बीजी बारीअेथी नीकळी जाय अेटला समयनी वात...''[107] (आगन्तुक : प्रारम्भ से पूर्व)

(रोशनी के झिलमिलाते खण्ड में जमी महफिल में बाहर के अंधकार से उड़कर एक पंछी एक खिड़की से भीतर आता है और दूसरी खिड़की से निकल जाता है, इतने समय की बात...)

यानी एक खिड़की और दूसरी खिड़की जीवन के दो दृष्टिकोण संसारी और संन्यासी हैं जिनसे गुजरी है ईशान की यह कहानी। विषयवस्तु, परिवेश और समय तीनों को बड़ी कुशलता से धीरूबेन पटेल ने इस उपन्यास में पिरोया है। ईशान उत्तर काशी के एक आश्रम में 15 वर्ष

तक साधु जीवन बिताने के बाद, भगवा वस्त्र त्याग पुनः घर लौट आता है। सांसारिक जीवन की विषमताएँ, सामाजिक समस्याएँ, बम्बई नगरी की भौतिक चकाचौंध के बीच जैसे कोई 'आगन्तुक' भूल से चला आया हो। वैभवशाली भाईयों-भाभियों के बदले मन, यहाँ तक कि उसे नौकर की ओरड़ी (बरामदे) तक में रहना पड़ता है। सोने का यह पिंजड़ा आकर्षक पर आत्मीयता से सूना-रिक्त था। भाईयों द्वारा कराई गई ईशान की जासूसी, आत्मिक साधक से लाभ उठाने की सांसारिक तरकीबें, संसारी लोगों की व्यवहार-चतुरता, साधक मन के भीतर की अगोचर रहस्यमयी शक्तियाँ इत्यादि बातें उपन्यास को नई-नई परिणति की ओर ले जाती हैं।

भाई आशुतोष का ईशान के प्रति स्नेहभाव है। अतः वह उसके लिए टाइपराइटर भी खरीद लाता है। वह ईशान में पिता की प्रतिछवि देखता है। आशुतोष के स्वर्गस्थ पिता की स्मृति में लेखिका ने स्मरण-शैली प्रयुक्त की है-

''खाली अवाज नहीं, बोलवानी लढ़ण पण... जाणे बापुजी ज बोल्या... आशुतोषना बापुजी.. ने संस्मरणोनां घटाटोप वादळो चड़ी आव्या, अेमनी छांयमां आशुतोष नानो थई गयो, निशाळे जतो आशुतोष बा नी साथे झगड़ा करतो आशुतोष, बेय नाना भाईओने दबड़ावतो आशुतोष।''[108]-(आगन्तुकःपृ. 28)

(मात्र आवाज़ नहीं, बोलने की लचक भी... मानो बापूजी ही बोले... आशुतोष के बापूजी... और संस्मरणों के बादल छा गए... इसकी छत्रछाया में आशुतोष छोटा हो गया... स्कूल जाता आशुतोष... बा के साथ झगड़ा करता आशुतोष... दोनों छोटे भाईयों को दबाता आशुतोष...)

घर वापस लौटने के बाद ईशान जैसे मँझधार में फँस जाता है। एक आत्मसाधक की करुणता की यह कहानी बहुत वैचारिक हो उठती है और पाठक के जीवन-दृष्टिकोण को विस्तार देती है कि संसारी या संन्यासी? मानव जीवन की आखिर सार्थकता क्या? दोनों ही मँझधार में फँसा ईशान त्रिशंकु की स्थिति को जीता है। स्वजनों के पारस्परिक जटिल संबंध ईशान के चिंतन को पुनः जैसे आत्मसाधक जीवन की ओर धकेलते हैं। ध्यानस्थ ईशान अपनी स्मरण यात्रा में कभी गुरु की बातें कभी यात्राएँ, कभी प्रवचनों को याद करता है। ईशान एक ही प्रश्न को लेकर उलझ जाता है - स्वगत कथन शैली का प्रयोग इस प्रकार हुआ है -

''पोते शा माटे अहीं आववा प्रेरायो? भाईना घरमां विदेह मानी छबि शोधे छे... गुरुदेव

उत्तरकाशीना आश्रममां लाध्यो हतो; तेमनां अवसानने कारणे अे आधार खोवाई गयो.. पोते आपमेळे त्याग कर्यो, स्वेच्छाअे आश्रम छोड्यो.. तो हवे जे कांई बने अेमां कोईनो वांक न जोवाय, आ लोको भलां छे ते नोकरनी ओरडीमां पण रहेवा दे छे। नहींतर पोतानो हक शो छे अेमना उपर के आ घर उपर।''[109] (आगन्तुक : पृ. 87)

(खुद किस वजह से यहाँ आने को प्रेरित हुआ? भाई के घर में रहकर संन्यासी की छवि खोजता है... उत्तरकाशी के गुरुदेव ने आश्रम का भार सौंपा, उनके अवसान के कारण वह आधार भी खो गया... खुद भी इच्छा से आश्रम का त्याग किया.... अब जो कुछ सामने है उसमें किसी का दोष नहीं देखा जा सकता। ये लोग तो भले हैं जो नौकर के कमरे में तो रहने देते हैं, वरना खुद का क्या हक इनके ऊपर या इस घर पर।)

गौण पात्रों के रूप में इप्सिता, निरंजनभाई और उनका बीमार पुत्र रजत ईशान को आत्मीयता देते हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि रजत ईशान के साधक–स्वरूप साधना के कारण ही स्वस्थ हो रहा है। धीरूबेनने आलंकारिक प्रतीक शैली का भी प्रयोग किया है–

''चार आँखोंमां आश्चर्यना तारा उग्या हता।''[110] (पृ. 15)

(चार आँखों में आश्चर्य के तारे उग गए थे।)

यही नहीं, भाषा के हिन्दी, मराठी रूपों का प्रयोग भी पात्रों के कथन में किया है। गौण पात्र सीताराम अक्सर मराठी बोलता है – ''शेठ नी टाइपराइटर आणला आहे, पाहिजे का तुमाला?''[111] (पृ. 71)

(शेठ ने टाइपराइटर लाया है, चाहिए क्या तुम्हें?)

या गुरु के स्मरणशील वाक्यों को ईशान याद करता है वे हिन्दी वाक्य प्रयोग जैसे–

''भीतर देखो बेटा। बाहर मत देखना, समझ गये?चाहे आश्रम में रहो, चाहे कहीं भी रहो... चलते रहना.. पहुँच ही जाना, समझ गये कि नहीं?''[112] (पृ. 8–59)

और इस प्रकार आगन्तुक ईशान की समग्र कथा अपने परिवेश व समय व विचार में गुँथी अन्ततः गन्तव्य की ओर पहुँचती है। आखिर ईशान संसारी जीवन से दुखी होकर वृन्दावन की ओर प्रयाण कर जाता है। इसलिए कहता है–

''कोईनुं मन दुभवीने शो फायदो थयो? ... आवी जातनुं वर्तन करवामां पोतानो छूपो

अहंकार तो नहीं होय? के पछी बीक हशे... स्त्रीनी बीक, दोलतनी बीक... क्यारेक लपसी जवाय तो? अे कर्दमभूमिथी अळगा ज रहेवानुं सारुं नहीं?''[113] (पृ. 111)

(किसी का मन दुखाकर क्या फायदा हुआ? ... इस तरह का व्यवहार करने में कहीं छुपा हुआ अहंकार तो नहीं? या फिर डर होगा... स्त्री का डर, दौलत का डर.. कहीं फिसल गए तो? इस कर्दम भूमि से अलग रहना अच्छा नहीं?)

इस प्रकार ईशान उपन्यास में न तो अधिक भावुक है और न ही पलायनवादी, बल्कि वह सोच–समझकर मनोआध्यात्मिकता का स्वीकार करता है। वीतरागी ईशान की यह विचार–शैली संसारी लोगों के लिए प्रेरणास्रोत है–

''सौथीपहेलां मिलन, पछी परिचय, पछी आत्मीयता, पछी आसक्ति... अभिमन्युनी जेम प्रवेश तो आसान छे आ बधां कोठामां, पण बहार निकळवानी विद्या न होय तो छेल्ले षड्रिपुओने हाथे मरवानुं, अे पण नक्की।''[114] (पृ. 169)

(सबसे पहले मिलन, फिर परिचय, फिर आत्मीयता, फिर आसक्ति... अभिमन्यु की भाँति इनमें प्रवेश करना तो आसान है, परन्तु निकलने की विद्या यदि नहीं आती हो तो अंत में षड्रिपुओं के हाथों मरना निश्चित है।)

कथा को कहने में धीरुबेन पटेल के भाषा–कौशल की अभिव्यक्ति सहज सरल है। संस्कृत शब्दों में– रिपु, आत्मीयता, तन्द्रा, आस्कित, कर्दम भूमि, अहं, आश्रम इत्यादि। तद्भव शब्दों में – दुभवी, वर्तन, वींधाई, मथता, आथमता, पाटियुं, बगासुं, सरनामुं, कागळ–पत्र, निस्बत आदि प्रयुक्त हैं।

अंग्रेजी–उर्दू–फारसी–मराठी शब्दों का प्रयोग भी पात्रानुकूल हुआ है। जैसे अंग्रेजी शब्दों में – प्ली..ज, टेलीफोन, डायल, टेक्सी,प्लेटफार्म, ओ.के., नथींग डुइंग, क्रास स्टीच आदि। उर्दू–फारसी शब्दों में – जमीन, दरिया, गिरदी, जवाबदारी, बेध्यान, ईरादो, फिकर आदि प्रयोग तथा

मराठी शब्दों में – तुमाला, आणला, पाहिजे, आहे का प्रयोग हुआ है।

निष्कर्षतः यह उपन्यास मानवजीवन को 'आत्मसाधना' के जीवन सत्य का साक्षात्कार कराता है। नायक प्रधान उपन्यास में सांसारिकता और सन्यासमयी जीवन के क्षितिजों को

मिलाकर सारत्व ढूंढने की कोशिश लेखिका ने की है। नायक पात्र ईशान की दृष्टि मानवीय मूल्यों को सहेजने की ओर रही है। कथा का संयोजन सुव्यवस्थित, गुंथा और भाषिक–शिल्प के साथ सुन्दर ढंग से हुआ है।

किम्बल रेवन्सवूड – (सन् 1981):

यों मधुराय रचनाकार के रूप में अभिनव प्रयोग के रूप में अत्यधिक लोकप्रिय हुए हैं। स्वयं अपने जीवन में एक जगह टिककर नहीं बैठे। कलकत्ता, गुजरात, अहमदाबाद, अमेरिका, शिकागो, होनोलूलू नाट्यमंच, दिग्दर्शक, पत्रकार इत्यादि परिवेश की झाँकियाँ उनकी रचनाओं में सहज आई हैं। उनके उपन्यासों में 'सांपबाजी', 'आपणे क्लबमां मळ्या हतां' नाटक का रुपांतरण है। इसी तरह 'सभा' उपन्यास 'कुमारनी अगाशी' नाटक का और 'कामिनी' 'कोई एक फूलनुं नाम बोलो तो?' का रुपांतरित उपन्यास है। इस प्रकार नाट्य से उपन्यास का सृजन उनकी प्रयोगधर्मिता का नवप्रमाण है। गुजराती दैनिक 'लोकसत्ता' की पूर्ति में भी उनका उपन्यास 'कल्पवृक्ष' धारावाहिक रूप से प्रकाशित होता रहा।

सन् 1981 की अभिनव कृति 'किंबल रेवन्सवूड' मधुराय की अधुनातन रचना है। इस उपन्यास पर दूरदर्शन धारावाहिक 'मिस्टर योगी' भी प्रसारित हो चूका है और वर्तमान में इसी उपन्यास पर आधारित एक फिल्म 'वॉट्स यॉअर राशि?' बन रही है।

'किंबल रेवन्सवूड' विषयवस्तु और शिल्प दोनों दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं नवीनतम प्रयोग है। गुजराती उपन्यासों में यह अपनी विशिष्ट पहचान इसलिए रखता है क्योंकि इसके माध्यम से लेखक ने हास्यपरक आधार पर पश्चिमी संस्कृति मिश्रित आधुनिक भारतीय संस्कृति का निरूपण प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में साफ तौर पर आधुनिक पीढ़ी में आया सामाजिक, नैतिक, रुढ़िवादी और आर्थिक बदलाव चित्रित है। मध्यमवर्ग का उच्च मध्यवर्ग में परिवर्तन सामाजिक आर्थिक स्तर पर ही नहीं, बल्कि भाषागत–स्तर पर भी हुआ है। अतः गुजराती–अंग्रेजी का मिश्रण या आधुनिक पीढ़ी पर अंग्रेजी का अत्यधिक प्रभाव इसमें देखा जा सकता है। शीर्षक भी अंग्रेजी का शब्द 'किम्बल रेवन्सवूड' है जो शिकागो की भारतीय–बस्ती (जगह) का नाम है।

प्रवासी भारतीय योगेशके जीवन की कथा के बहाने लेखक ने आधुनिक पीढ़ी के गुजरात

की संस्कृति के बदलाव को रेखांकित किया है। वस्तुतः कथा संवेदनशीलता की बजाय बौद्धिक ही ठहरती है। संरचना की दृष्टि से सारी कथा पाठक को आरंभ से अंत तक बाँधे रखती है क्योंकि विषयवस्तु में ही नया प्रयोग मधुराय की अपनी छटा एवं कला बिखेरता है। नायक योगेश एम.बी.ए. कर अमेरिका में नौकरी करता है। वहाँ साथ में काम करने वाली लड़की 'पेगी' से उसे सच्ची मुहब्बत है। कथा के आरमंभ में मधुराय ने योगेश के रूप में स्वयं को ही प्रस्तुत किया है और फिर भीड़–भीड़ में खोते लोग.. और मिलता है एक लड़का वाय.एस. पटेल यानि योगेश शंकर पटेल। वह शिकागो की एक बस्ती 'किम्बल रेवन्सवूड' से लोकल पकड़कर डाउन टांउन में जॉब करता है। जैसे ही उसे 'मदर सीरीयसली ईल, कम सून' का तार मिलता है, वह इंडिया के लिए रवाना हो जाता है। समय बिताने के लिए रास्ते में वह यों ही 'धर्मपत्नी की पसंदगीः ज्योतिषशास्त्रनी नजरे' पुस्तिका खरीद लेता है।

यह पुस्तक ही इस पूरे उपन्यास का रोचक आधार बनती है। यहाँ आते ही उसे पता चलता है कि पिता ने उसकी शादी की सब तैयारियाँ (हॉल बुक वगैरह) कर रखी है, बस, लड़की पसन्द करनी बाकी है। योगेश सोच में पड़ जाता है। उसके लिए तो 'छोकरी अेटले छोकरी' (लड़की यानि लड़की) है पर हाथ की वह पुस्तक देखकर ज्योतिषी आधार पर 12 वेराइटी में लड़कियाँ देखना तय करता है। उसने सोचा कि–

''आपणे वेपारीना दीकरा, बारे वेराइटी जोइ पछी माल लई ने।''[115] (पृ. 6)

(हम व्यापारी के लड़के, बार वेराइटी देखकर ही माल लेना चाहिए।)

इस प्रकार, कथा मूल मूल वस्तु 'विवाह' के विषय को लेकर चलती है। पाठक इस कथा की रोचकता में रमता है और इसी बीच मिलते जाते हैं नयी बदली हुई संस्कृति के चित्र–विचित्र अनुभव।

भारतीय परम्परानुसार विवाह के लिए बुजुर्गों ने दहेज, शिक्षा, रूप–रंग के आधार पर सुविधानुसार लिस्ट भी बनाकर दे दी है। अंकल देवुभाई, मित्र गोविंदभाई, रमेशभाई भी अपने–अपने अनुभव के आधार पर उसे सलाह–मशवरा देते रहते हैं। वसंत नामक मित्र तो उसे 'लुक, बुक और कुक' की थीयरी भी लड़की पसंद करने के लिए बताता है। योगेश देखता है कि अहमदाबाद अब बहुत कुछ बदल चुका है। दूध लेने जाने पर गरारा पहने गोरी लड़की एक नज़र

देखता है तो सात साल की भतीजी का यह कहना कि ''योगेश अंकल, अे छोकरी ब्रान्ड न्यू नथी''[116] (पृ. 7) (यह लड़की ब्रान्ड न्यू नहीं है, योगेश अंकल।) उसे चौंकाता तो है ही, बल्कि परिपक्व, खुले गुजराती माहौल का भी परिचय देता है।

लड़कियों को देखने, समझने का परिचय अत्यंत रोचक रूप में सामने आता है क्योकि सभी लड़कियाँ योगेश को नहीं बल्कि अमेरिका जाने के ख्वाब से रंजित हैं। ग्रीनकार्ड का लोभ मध्यमवर्गीय परिवारों की कमजोरी जो है। अंजलि, चन्द्रिका, ममता, झंखना, प्रगति, विशाखा, पदमा, भावना सबके साथ अलग-अलग अनुभव जैसे कोई चलचित्र सामने से गुजर रहा हो। सब की अपनी अलग-अळग कहानी, स्वच्छंद, स्वतंत्र अभिलाषाओं से भरी जिंदगी।

ममता जो योगेश से मात्र फ्रेंडशिप चाहती है, पदमा ज्योतिष में रूचि रखती है, योगेश से सेक्स की माँग करती, कीर्ति शिवाडकर दर्शनशास्त्री सी भंगिमा लिए, हिंदू-संस्कृति से प्रेरित-प्रभावित भावना अपने क्रिश्चियन प्रेमी की कहानी बताती है। विशाख - सेक्सी पुरुष को चाहने वाली, कॉन्ट्रैक्ट मैरिज में मानती कीर्ति शिरवाडकर, इन अनुभवों से भौंचक्का योगेश बाद में स्वयं को अकेला अनुभव करता है, किसी में भी 'सौम्य आत्मीयता' का स्पर्श न कर सका। 'संवाद' ऐसे चुटीले कि व्यंग्य-स्पर्श पाकर जैसे बोलते से लगते हैं। योगेश से भावना कहती है-

''माणसना जन्मनी ज्ञाति नथी होती, उछेरनी, विचारनी, विद्यानी ज्ञाति होय छे। तमे मारा विचार जाण्या, में तमारा जाण्या, आपणी ज्ञाति मळती नथी।''[117] (पृ. 111)

(मनुष्य के जन्म की कोई जाति नहीं होती, पोषण की, विचार की और विद्या की जाति होती है। तुमने मेरे विचार जाने, मैंने तुम्हारे, हमारी जाति नहीं मिलती।)

अमेरिकन 'पेगी' योगेश की सच्ची दोस्त है, योगेश अपने मन की बात उसे कहकर उससे ही शादी करना चाहता है, पर 'पेगी' उसे दोनों संस्कृति की भिन्नता स्पष्ट समझा देती है-

''हुं शुं कहुं योगेश, वांक तारो के मारो नथी, वांक आपणा उछेरनो छे। तारा देशमां छोकराना लग्नमां पण फेमिलीनी मरजी नामरजी मोटो प्रश्न होय छे। मारा देशमां किन्डरगार्टनथी ज अेक बॉयफ्रेन्ड न होय त्यां सुधी छोकरी छोकरी गणाती नथी।''[118] (पृ. 151)

(मैं क्या कहूँ योगेश, दोष तुम्हारा या मेरा नहीं, हमारी परवरिश का है। तुम्हारे देश में शादी में भी परिवार की पसंद नापसंद बहुत बड़ा प्रश्न होता है। मेरे देश में किन्डरगार्टन से ही

यदि एक बॉयफ्रेन्ड न हो तो लड़की लड़की नहीं मानी जाती।)

आखिर अंत में योगेश चन्द्रिका से शादी करता है। इस मुख्य कथा के साथ–साथ अंकल देवुभाई के विवाहेत्तर संबंध, देवुभाई का भ्रष्टाचारी प्रोजेक्ट, धोलकिया द्वारा मुँहमांगी रकम, दहेज विरोधी योगेश का भाषण, नौकर का ड्राइवरी के लिए अमेरिका जाने का प्रयत्न, वीसा बनाना इत्यादि प्रसंग कथा में नाटकीय शैली को उपस्थित करते हैं। गुजराती भाषा की नवीनता में मुहावरेदार भाषिक प्रयोग देखते ही बनता है। जब देवुभाई और योगेश अपनी बातचीत मुहावरेदार कहावत शैली के प्रयोग में करते हैं–

'अेक कहेवत याद राखजे छोकरा, ब्लड इज़ थिकर धॅन वॉटर।'

'तमे पण याद राखजो देवुभाई।'

'घर फूटे घर जाय, कजिया वधारवो होय तो मारी ना नथी, नुकशान बंनेनुं छे।'

'कजियानुं मों काळुं' योगेशे कह्युं,

'संप त्यां जंप' देवुभाईअे कह्युं।

'कोलसानी दलालीमां हाथ काळा'

'सापे छछुंदर गळ्या जेवुं थाय'

'करैक्ट, अेक–अेक राउण्ड थई गयो।''[119] (पृ. 139)

संरचना की दृष्टि से डॉ. नरेश वेद इस उपन्यास के बारे में कहते हैं–

''जीवन अनुभवना निरुपण अर्थे नवलकथा मुख्यत्वे चार विधाओ (modes) नो उपयोग करे छेः वास्तवदर्शी (Realistic), तर्कलक्षी (essayistic), प्रतीकलक्षी (symbolic) अने वक्रतालक्षी (Ironic).. आ नवलकथा जीवन विशे सीधी रीते कोई कहेवाने बदले तिर्यकपणे कशुंक सूचवती, ध्वनित करती Ironic Mode नी नवलकथा छे।''[120] (गुजराती कथा विश्व : पृ. 363)

वस्तुतः यह उपन्यास आधुनिक विकसित उच्च मध्यमवर्गी? बढ़ते परिवारों और बदली हुई भारतीय संस्कृति को समझने में भाषा, शिल्प और विषय तीनों स्तर पर सहायक सिद्ध होता है।

हिन्दी–गुजराती साठोत्तरी उपन्यास का संरचनात्मक साम्य–वैषम्यः

स्वातंत्र्योत्तर भारतीय उपन्यासों पर यदि समग्रतया एक दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि विषय की विविधता और भाषा शिल्प के नूतन प्रयोग उपन्यासों में उत्तरोत्तर वृद्धि पाते रहे। मसलन देश विभाजन, साम्प्रदायिकता और त्रस्त दुखी लोगों ने यथार्थपरक लिखा। पंजाब और कश्मीर के रचनाकारों ने प्रत्यक्ष अनुभूति से प्रेरित होकर लिखा। भारत की मिट्टी, खुश्बू, आज़ादी, औद्योगिकरण के बाद उभरा समाज का मध्यमवर्ग, उनकी नई–नई समस्याएँ उपन्यासों में चित्रित हुईं।

साठोत्तरी उपन्यासों में खास तौर से संरचना विषय–शिल्प में यह पाया गया कि सामाजिक रूप में रहनेवाला व्यक्ति शहर की भीड़ में अपने को अकेला महसूस करने लगा, महिलाएँ शिक्षित, स्वतंत्र, नौकरीपेशा हुई, तो भारतीय स्त्री–पुरुष समीकरण भी बदलने लगे। प्रेम की नैतिक–अनैतिक जैसी व्याख्याएँ निरर्थक सिद्ध हुई। दलित लेखन उपन्यासों में सशक्त अभिव्यक्ति बनकर पेश हुआ। यही नहीं, राजनीतिक गिरावट, भ्रष्टाचार और नैतिक अवमूल्यन ने भी साठोत्तरी उपन्यासों के प्रिय विषयों में अहमियत पाई।

सच कहें तो भारतीय उपन्यासों में हिन्दी–गुजराती साठोत्तरी उपन्यास अपने युग को पहचानने के प्रयास हैं। 1962, 1965 और 1971 के युद्धों ने भारतीय जनजीवन की आर्थिक प्रगति को डाँवाडोल किया, यह सामाजिक संतुलन के लिए खतरनाक था। अमीरी–गरीबी जैसे असंतुलन से वैमनस्य और हिंसाएँ, बलात्कार, विकृतियाँ उभरने लगीं। शहरी जनजीवन के बीच त्रस्त मध्यमवर्ग स्वयं पीड़ित भी रहा और यही साहित्य के माध्यम से लिखता भी रहा। परम्परा और आधुनिकता की दौड़ के बीच मानव अधिक से अधिक 'अकेला' होता गया। स्त्रियाँ अपने अस्तित्व को बनाने की कोशिश में लगीं, वह अनुचरी की बजाय पुरुष की सहचरी बनने के लिए प्रयासरत रहीं, परंतु पुरुष के मानदण्डों पर वह खरी न उतर पाई। वस्तुतः वह विवशता के पहिये तले पिसती रही, आज भी वह अपनी स्थिति के प्रति संघर्षरत हो सामाजिक परिवर्तन के प्रतिबद्ध खड़ी है। पिछड़े शोषित वर्ग की करुणता भी साठोत्तरी उपन्यासों में आई।

इस प्रकार हिन्दी–गुजराती उपन्यासों की साठोत्तरी–संरचना, उपरोक्त विषयों की परिधि में नगरीय–परिवेश, असुरक्षा बोध, अकेलेपन, संत्रास, निराशा, घुटन और कुंठाओं को अपनी अभिव्यक्ति का कथ्य बनाती है। साठोत्तरी उपन्यासों के मध्यमवर्गीय उपन्यासों का विषय व्यापक

और विशद है, बहुरंगी है।

संरचनात्मक विषयवस्तु की दृष्टि से प्रेम का अन्तर्द्वन्द्व, उलझाव, त्रास आदि विशेष रूप उपन्यासों के विषय बने। प्रेम का यह अन्तर्द्वन्द्व जहाँ हिन्दी के उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरे' में हरबंस और नीलिमा के प्रेम की संघर्षमयी परिस्थितियों को व्याख्यायित करताहै, वहीं गुजराती उपन्यास 'अमृता' में उदयन–अमृता का प्रेम द्वन्द्वयुक्त है। सरोज पाठक 'नाइटमेर' में भी नियति के साथ प्रेम का द्वन्द्व प्रस्तुत करती हैं।

मध्यमवर्गीय असंतोष, निराशा, घुटन, कुंठा और अकेलेपन की व्याख्या हिन्दी के उपन्यास 'न आनेवाला कल' और 'एक नन्ही किन्दील' में रूपायित है। वहीं यह विषय गुजराती उपन्यास 'प्रियजन' और 'कामिनी' में चित्रित है। इसी प्रकार आर्थिक विषमता, महँगाई, भ्रष्टाचारी पर आधारित उपन्यास हिन्दी में 'राग–दरबारी', 'कन्दील और कुहासे' में संयोजित है वहीं यह विषय गुजराती उपन्यासों 'किंबल रेवन्सवूड', 'तिराड' आदि में व्यक्त हुआ है।

नारी चेतना की आवाज 'बत्रीस पुतळीनी वेदना' में अभिव्यक्ति पाती है तो बाल मनोविज्ञान का विषय हिन्दी में 'आपका बंटी' के माध्यम से और गुजराती उपन्यासों में 'फेरो' तथा 'चिन्ह' में कलात्मक रूप में उपस्थित है। हिन्दी का 'आपका बंटी' उपन्यास जहाँ विफल–दाम्पत्य की अभिव्यक्ति करता है वहीं गुजराती उपन्यास 'उर्ध्वमूल' भी दाम्पत्य जीवन की विफलता को केन्द्रीयरूप में सामने रखता है।

इस प्रकार, साठोत्तरी गुजराती–हिन्दी उपन्यासों में संरचनात्मक–विषयवस्तुओं में लगभग साम्यता है।

भाषा–शिल्प शैली की तकनीक में ये उपन्यासकार काफी समानता लिए हुए हैं, भले ही लिपि की दृष्टि से हिन्दी–गुजराती में असाम्य हो, परन्तु एक ही भाषा–परिवार (अर्धमागधी शौरसेनी अपभ्रंश0 की होने से भिन्नता की गुंजाइश कम ही है। शिल्पगत रूप में हिन्दी–गुजराती साठोत्तरी उपन्यासों में साम्यता है।

शिल्प की विशिष्टता, यथार्थ की जटिलता, मध्यमवर्गीय संघर्ष के विविध स्तर, गद्य भाषा के विभिन्न रूप, रचनाकार की कल्पनाप्रवणता और प्रयोगधर्मिता साठोत्तरी उपन्यासों में है। गाँव के रूप में शिवगंज, नगर–दिल्ली, अहमदाबाद, महानगर – शिकागो अमेरिका आदि के जनजीवन

का वर्णन साठोत्तरी उपन्यासों की कथाओं में मौजूद है। इन यथार्थवादी उपन्यासकार ने वर्णन की बजाय विश्लेषण पर ध्यान ज्यादा दिया है। गद्य शैली के विविध स्तरों पर इन उपन्यासों में नाटक, कहानी, आत्मकथा, निबंध, संस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, यात्रावृत्त आदि विभिन्न विधाओं का इसके शिल्प में प्रयोग मिलता है। आवश्यकतानुसार नाटकीयता, किस्सागोई, भावात्मक प्रवाह, मनोविश्लेषण, लालित्य स्वरूप में भी प्रस्तुत हुए हैं। इसी प्रकार जैसे फ्लैशबेक शैली (पूर्वदीप्ति शैली), डायरी या पत्र शैली का प्रयोग साठोत्तरी उपन्यासों में विशेष रूप से हुआ है।

वर्णनात्मक शैली श्रेष्ठ उपन्यासों में प्रस्तुत नहीं होती। यों वर्णन कथा को कहने का जरुरी माध्यम है, लेकिन एक मार्त्र वही तरीका कथा कहने का हो, ऐसा नहीं है। यथार्थवादी उपन्यास विश्लेषण परक शैली के साथ–साथ कई नई टेकनीक का प्रयोग करते हैं। जैसे धर्मवीर् भारती का उपन्यास 'गुनाहों का देवता' पाठकों की भावनाओं को प्रभावकारी ढंग से उत्तेजित करने में सफल रहा है, इसी प्रकार गुजराती के मधुराय की भाषा टेकनीक, एक खास ढंग की प्रयोगधर्मिता और 'किंबल रेवन्सवूड' में तो बदली हुई मार्डन गुजराती, सहज संवाद, बोलचाल की शैली का प्रयोग हुआ है। शब्दों से दृश्यों को रचना उपन्यास की रोचकता के लिए जरुरी हुआ है।

जैसे कृष्णा सोबती 'जिन्दगीनामा' उपन्यास में 'डेरा जट्टां' गाँव की संस्कृति कथा करीब 62 दृश्यों में प्रस्तुत कर देती हैं। इन दृश्यों में मंदिर, गुरुद्वारे, मस्जिद, शरदपूर्णिमा, लोहड़ी, ईद, दशहरे, दीवाली के दृश्य, गाँव में डकैती, कत्ल, फौज में भर्ती, जन्म, जन्म–संस्कार, विवाह, जश्न, मृत्यु संस्कार इत्यादि जीवन के हर पहलू को चित्रित कर देती है।

भाविक संरचना की दृष्टि से कथा को कहना, कथा को रचना और कथा को दिखाना तीनों अलग बात हैं। साठोत्तरी उपन्यासों में कथा को प्रस्तुत कर दिखाने का हौसला ज्यादा है। नाट्यात्मक ढंग से प्रस्तुति, यथार्थ के लिए हास्य व्यंग्य की पैंतरेबाजी अथवा दार्शनिकता की गहराई इन उपन्यासों में देखी जा सकती है। संस्कृतनिष्ठ शब्दों की गरिमापूर्ण अभिव्यक्ति के साथ–साथ जनजीवन की चलती भाषा का प्रयोग या फिर बढ़ते अंग्रेजी भाषा के प्रभाव को भी इन उपन्यासों में सहज ही पाया जा सकता है। मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग यथास्थान है। यहाँ तक कि मधुराय ने तो गुजराती में अंग्रेजी कहावत–मुहावरों को मिलाने की प्रयोगधर्मिता पेश की है। जैसे–

''अेकी साथे बे वर्ड फिल थाय।''[121] (पृ. 81)

''सुगर नाखीअे अेटले स्वीट थाय।''[122] (पृ. 115)

''टीथ आलनार च्युईंगम पण आलशे।''[123] (पृ. 262) इत्यादि।

गद्य की प्रयोगधर्मिता विविध शैलियों के नवीन प्रयोग में हुई है। जैसे जीवनीपरक शैली की दृष्टि से 'कामिनी' के बारे में पाठक द्वारा कहे ये वाक्य– ''नानपणथी कामिनीना शरीर प्रदर्शननी चालबाजी अे कुटुंबना वडाओ, काका, फुआओ उपर पण अे वापरी लेती। अने कामिनी हंमेशा निर्दोष बाळकीनो अभिनय करती।''[124] (कामिनी, पृ. 99)

(बचपन से ही कामिनी में शरीर प्रदर्शन की चालाकियाँ थीं। वह परिवार के काका, फूफाओं पर इसका प्रयोग कर लेती और कामिनी हमेशा निर्दोष बालिका का अभिनय करती।)

मुहावरेदार शैली का प्रयोग हिन्दी और गुजराती दोनों उपन्यासों में देखिए कितने प्रभावशाली ढंग से है–

''झूठ बोलते वक्त जाने जबान कुछ जकड़ क्यों जाती है। इससे झूठ बोलने का सारा मजा किरकिरा हो जाता है।''[125] (मोहन राकेश : अंधेरे बन्द कमरे, पृ. 13)

''सांसारिक माणसो आँख आड़ा कान करी ले ले तेवी नानी सरखी घटना माटे उदयन आकाश–पाताळ अेक करवा लागी जाय छे।''[126] (रघुवीर चौधरी : अमृता पृ. 125)

चेतना–प्रवाह शैली उपनयास संरचना की भाषिक कला कही जा सकती है। इसके आधुनिक उपन्यासों में कथानुरूप प्रयोग किया है जैसे 'आपका बंटी' में मन्नु भण्डारी और गुजराती के 'प्रियजन' में वीनेश अंताणी के उदाहरण दृष्टव्य हैं –

''... और रोशनी के चौखटों पर कहीं से एक धुंध की परत छा गई। लेटा तो साथ–साथ दौड़ते हुए रोशनी के सारे चोखटे स्याह अंधेरे में घुल गए। वह चमकता हुआ लाल तारा भी डूबा और बंटी उस अंधेरे में डूबता ही चला गया।''[127] (आपका बंटी, पृ....)

नायिका चारु का यह वाक्य– ''आखी जिंदगी खूब निकटताथी जीवी लीधा पछी दरेक क्षण ज्यारे पोतपोतानानी जिंदगी तरफ चालवा लागे छे त्यारे अेकला तो थई जवाय... हुं खूब अेकली थई गई छुं। पण अे तो दिवाकर नथी अेटले अेवुं ज थवानुं ने।''[128] (प्रियजन, पृ. 176)

(जिंदगी को बहुत करीब से जी लेने के बाद प्रत्येक जन अपनी अपनी जिंदगी की ओर चलने लगते

हैं। तब अकेले तो हो ही जाना है... मैं बहुत अकेली हो गई हूं, पर यह तो दिवाकर नहीं है, तो ये तो होना ही था न।)

पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग भी उपन्यास की गुणात्मकता बढ़ाता है। हमने विश्लेषण करते हुए पाया कि गुजराती–हिन्दी के दोनों उपन्यासों में लगभग इसके प्रयोग मिलते ही हैं। जैसे 'किम्बल रेवन्सवूड' में मधुराय की इस प्रस्तुति में योगेश द्वारा पेगी के साथ बिताए दैनन्दिनी जीवन के वे हिस्से, जिन्हें योगेश कन्या पसंदगी के दौरान महसूस करता हैः

''शिकागोमां पेगीअे इन्डियन फूड़ खावानी इच्छा दर्शावतां पेगीना रसोडामां योगेश इन्डियन स्पाइसीज रांधवा बेठो हतो। हाथमां हलदर–हिंग–तज–लविंग आवतां अेना मनमां स्वाद सळवळी उठेला, अेणे उंधियुं बनावेलुं, अने फ्रेन्कली फक्त स्वाद याद करी–करीने बनावेलुं, छतां सरस बन्युं हतुं। पेगीअे सिसकारी करी–करी खाधुं हतुं। हवे खबर पड़ी के मारो इन्डियन आटलो बधो सेक्सी केम छे। आ बधा मसाला तने सेक्सी बनावे छे, कही पेगी अेने वळगी पडी हती।''[129]
(किम्बल रेवन्सवूड : पृ. 173)

(पेगीने शिकागो में इन्डियन फूड़ खाने की इच्छा व्यक्त की तो योगेश पेकी की रसोई में इन्डियन फूड़ बनाने बैठा था। हाथ में हल्दी–हिंग–तज–लौंग के कारण मन में स्वाद की लालसा जग उठी, उसने 'उंधियु' बनाया था [और सिर्फ उस स्वाद को याद कर–करके बनाया था, फिर भी बहुत स्वादिष्ट बना था। पेगीने सिसकियाँ भर–भर कर खाया था। 'अब पता चला कि मेरा इन्डियन इतना ज्यादा सेक्सी क्यों है। इन सब मसालों ने तुझे सेक्सी बनाया है' कहकर पेगी उससे चिपक गई थी।)

पात्र की दृष्टि से भी देखें तो साठोत्तरी हिन्दी–गुजराती उपन्यासों में पात्रों की जीवन्तता मिलती है। उसमें स्त्री–बच्चे, पुरुष, अमीर–गरीब, शहरी–ग्रामीण, शिक्षित–नौकर, उच्चवर्ग–मध्यवर्ग, हिन्दु–मुस्लिम सभी तरह के पात्र प्रस्तुत हुए हैं। मधुराय का 'योगेश' पात्र (किंबल रेवन्सवूड) व्यक्ति चरित्र होते हुए भी प्रतिनिथि पात्र (टाइप चरित्र) के रूप में 'प्रवासी भारतीय' (NRI) पात्र का प्रस्तुतिकरण है। मिथकीय चरित्र स्वरूप 'कामिनी' में मधुराय ने 'शेखर खोसला' पात्र की सृष्टि की, जिसकी वास्तविकता का पता उपन्यास के अंत में ज़ाकर चलता है।

साठोत्तरी उपन्यासकारों की दृष्टि आधुनिकतावादी रही है। वास्तव में आधुनिकतावादी दृष्टि

समाज को एक आधुनिक लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष आकार प्रदान करती है। यद्यपि मार्क्सवाद की यह विरोधी है। हिन्दी उपन्यासकारों में अज्ञेय, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी आदि और गुजराती उपन्याकारों में रघुवीर चौधरी, धीरूबेन पटेल, इला आरब मेहता, वीनेश अंताणी, सुरेश जोशी, मधुराय ऐसी ही आधुनिकतावादी जीवन–दृष्टि लेकर चले हैं।

* * * *